छान्दोग्योपनिषद्

(प्रथमाध्याय सानुवाद)



जगद्‌गुरु

श्रीमद्‌वल्लभाचार्य वंशावतंस

आचार्यवर्य्य गोस्वामितिलकायित

श्री १०८ श्रीइन्द्रदमनजी (श्रीराकेशजी) महाराज



नाथद्वारा

जन्मतिथि फाल्गुन शुक्ल ७

विक्रम संवत् २००६

प्राकट्य

२४ फरवरी सन् १९५०

श्रीनाथद्वारस्थ विद्याविलासिगोस्वामितिलकायित
श्री १०८ श्रीइन्द्रदमनजी (श्रीराकेशजी)
महाराज श्री की आज्ञा से प्रकाशित

छन्दोग्योपनिषद्

अनुवादक संशोधक एवं संपादक
त्रिपाठी यदुनन्दन श्रीनारायणजी शास्त्री

अध्यक्ष

विद्याविभाग

: : प्रकाशक : :
विद्या विभाग, मंदिर मण्डल नाथद्वारा

संवत् २०७४
द्वितीय आवृत्ति
प्रति - २०००

न्योछावर 15/-रु.

।। श्रीहरिः ।।

किंचिद् ज्ञातव्यम्

उप+नि+सद्+क्विप् के संयोग से उपनिषद् बना है। ब्राह्मण ग्रन्थों के साथ संलग्न कुछ रहस्यवादी रचना जिसका मुख्य उद्देश्य वेद के गूढार्थ का निश्चय करना है। छान्दोग्य उपनिषद् सामवेदीय तवलकार ब्राह्मण के अंतर्गत है, यह उपनिषद् बहुत ही महत्वपूर्ण है, इसकी वर्णन शैली अत्यन्त क्रमबद्ध और युक्ति युक्त है, इसमें तत्त्वज्ञान और तदुपयोगी कर्म तथा उपासनाओं का बड़ा विशद और विस्तृत वर्णन है। प्रथम अध्याय में जो शिलका, चैकितायन और प्रवहण का संवाद है।

संसार का बड़े से बड़ा ऐश्वर्य प्राप्त होने पर भी आत्म ज्ञान के बिना पूर्णशांति प्राप्त होना सर्वथा असंभव है। इस उपनिषद् में बहुत ही उपयोगी विषय है। उपनिषद् आरण्यको में ही संमिलित है तथा उन्हीं का विशिष्ट अंग हैं। वेद के अन्तिम भाग होने से तथा सारभूत सिद्धान्तों का प्रतिपादक होने से उपनिषद् ही वेदान्त के नाम से विख्यात है, उपनिषद् वस्तुतः यह आध्यात्मिक मानसरोवर है जिससे ज्ञान की भिन्न–भिन्न सरिताएं निकलकर इस पुण्य भूमि में मानव मात्र के लिये ऐहिक कल्याण आमुष्मिक मंगल के लिये प्रवाहित होती है। छान्दोग्य में कहा भी है कि एक आत्मा को भलीभांति जान लेने

पर यहां सब कुछ ज्ञात हो जाता है। 'एकस्मिन् विज्ञाते सर्वमिदं विज्ञातंभवति ऐसा ही अन्य श्रुतियां भी कहती है। उपनिषद्, ब्रह्मसूत्र, गीता ये वेदान्त दर्शन के तीन प्रस्थान है। उन्हें प्रस्थानत्रयी भी कहते है। प्रस्थानत्रयी में मुख्य उपनिषद् ही है। उपनिषदों में मुख्यत: आत्मज्ञान निरूपण है द्विज मात्र के लिये उसमें कर्तव्यों का उपदेश किया गया है।

छान्दोग्य उपनिषद् विशद् ग्रन्थ है, परन्तु पूर्व में छान्दोग्योपनिषद् का प्रथमाध्याय भवद्धर्म बोध नामक तद् भाष्य श्रीरमानाथ जी शास्त्री का संवत् १९८४ में प्रकाशित हुआ था। पूज्यपाद् आचार्यवर्य्य गो.ति. श्री १०८श्री इन्द्रदमन जी (श्री राकेश जी) महाराज श्री की आज्ञा से विद्याविभाग ने सुगमता पूर्वक ग्राह्यता के लिये अन्वय सहित पद तथा अर्थ और भावार्थ दे दिया है। आशा है यह त्रयोदश खण्डात्मक ग्रन्थ पाठकों के लिये अधिक उपादेय होगा।

अशुद्धि संशोधन में ध्यान रखते हुए भी मानव स्वभाव वश भूल होना स्वाभाविक है। क्योंकि गच्छत: स्खलनं क्वापि।

निवेदक—

यदुनन्दन त्रिपाठी

विद्याविभागाध्यक्ष

अथप्रथमाध्यायस्य

प्रथम खण्ड:

'ओमित्येतदक्षरम्' इत्यादिमन्त्र से प्रारम्भ होने वाला अध्यायों का यह ग्रन्थ छान्दोग्य–उपनिषद् है। इसका अर्थ जिज्ञासुओं के लिये, इसके शब्दार्थ एवं भावार्थ यहां दिया जा रहा है।

उपासना के उपदेश का प्रारम्भ करते हुए प्रथम ब्रह्मवाचक ॐकार की उपासना करते है:–

ओमित्येतदक्षरमुद्गीथमुपासीत ओमिति
ह्युद्गायति तस्योपव्याख्यानम् ॥ १॥

<u>**सान्वय शदार्थ:–**</u> ॐ इति एतत्=ॐ इस, अक्षरम्–वर्णरूप, उद्गीथम्=सामके अवयवको, उपासीत् = भावनाकरे, हि = क्योंकि, ॐ इति = ॐ इस प्रकार, उद्गायति = उच्चारण करता है, तस्य = इसका, उपव्याख्यानम् = गुण कीर्त्तन, उपासनम् = उपासना है।

<u>**भावार्थ:–**</u> ॐ यह अक्षर उद्गीथ नामक सामका अवयव है, इसकी उपासना करनी चाहिये, यह परमात्मा का प्रतीक अर्थात् प्रतिमूर्ति विशेष है, इस ॐकार की उपासना से परमात्मा प्रसन्न होते है, ॐकार के उच्चारण किये विना जो कर्म किया जाता है, वह कर्म फल रहित होता है, इसलिये सभी कर्मों के प्रारम्भ में ही ॐकार का उच्चारण किया जाता है, ॐकार से आरम्भ

करके ही मन्त्रादि का उच्चारण किया जाता है, इसीकारण ॐकार को उद्गीथ कहा गया है, ॐकार की विभूति और गुणों का वर्णन करना ही उसकी उपासना है। ।। 1 ।।

एषां भूतानां पृथिवी रसः पृथिव्या
आपोरसोऽपामोषधयो रस औषधीनां
पुरुषो रसः पुरुषस्य वाग्रसो वाच ऋग्रस
ऋचः साम रसः साम्न उद्गीथो रसः ।।२।।

सान्वय शदार्थः– पृथिवी = पृथिवी, एषाम् = इन, भूतानां = भूता में, रसः = सार है, औषधयः = औषधी, अपाम् = जलका, रसः = सार है, पुरूषः = पुरूष औषधीनाम् = औषधों का, रस = सार है, वाक् = वाणी, पुरूषयस्य = पुरूष का, रसः = सार है, ऋक् = ऋचा, वाचः = वाणीका, रसः = सार है, सामः = साम, ऋचः ऋचाओं का, रसः = सार है, उद्गीथः = ॐकार, साम्नः = सामका, रसः = सार है।

भावार्थः– चर अचर समस्त प्राणियों की उत्पत्ति स्थिति और लय के कारण पृथिवी स्थावर–जंगमरूप सकल जगत का सार है, जल पृथिवी का सार है, कारण कि– पृथिवी जल में ही ओत–प्रोत है, जल का सार संपूर्ण औषधियें है, जलसे ही सभी औषधियों का परिणाम देखा जाता है, पुरूष सभी औषधियों का सार है, कारण कि औषधियों का परिणाम ही जीव का शरीर है। पुरूष का सार वाणी है, क्योंकि वाक्–इन्द्रिय ही पुरूष की सभी इन्द्रियों में मुख्य है, वाणी का सार ऋचा है ऋचाओं का सार साम है तथा सामका सार उद्गीथ है। ।।२।।

स एष रसानां रसतमः परमः परार्ध्यो

ऽष्टमो यदुद्गीथः ।।३।।

सान्वय शदार्थ:– सः = वह, एषः = यह, रसानाम् = सारों का, रसतमः = परम सार, परमः = सबसे उत्तम, पराद्धर्थः = परमात्म स्थानीय है, यत् = जो उद्गीथः = ॐकार है।

भावार्थ:– अतएव यह उद्गीथ नामक ॐ कार सार का सार अन्य सभी से श्रेष्ठ है, परमात्मास्थान के योग्य और पृथिवी आदि रसों की गणना में आठवां है।

कतमा कतमर्क्कतमत्कतमत्साम कतमः

कतम उद्गीथ इति विमृष्टं भवति ।।४।।

सान्वय शदार्थ:– कतमा–कतमा = कौन कौन सी, ऋक् = ऋक् है, कतमत् कतमत् = कौन कौन सा, साम = साम है, कतमत् कतमत् = कौन कौनसा, उद्गीथः = उद्गीथ है, इति = यह, विमृष्टम् = विचार करने योग्य, भवति होता है।

भावार्थ:– इसके पश्चात् ऋक् क्या है? साम क्या है? तथा उद्गीथ क्या है? इन तीनों ही प्रश्नों का विचार किया जाता है।

वागोवर्क्प्राणः सामोमित्येतदक्षरमुद्गीथः

तद्वा एतन्मिथुनं यद्वाक्च प्राणश्चर्क्च साम च ।।५।।

सान्वय शदार्थ:– वाक्–एव = वाणी ही, ऋक् = ऋक् है, प्राणः = प्राण, साम = साम है, ॐ इत्येतत् = ॐ यह, अक्षरम् =

अक्षर, उद्गीथः = उद्गाथम् है, तत् = सो, वा =या, एतत् = यह, मिथुनम् = जोड़ा है, (युग्म) य=जो, वाक् च, प्राणः च = वाणी तथा प्राण, ऋक् च, साम, च = ऋक् तथा साम है।

भावार्थ:– कारण तथा कार्य का अभेद होने से वाक् ही ऋक् है और प्राण ही साम है तथा ॐ यह अक्षर ही उद्गीथ है ऋक् और साम इस मिथुन का कारण भूत वाक् तथा प्राण यह दो का जोड़ा / युग्म ह।

तदेतन्मिथुनमोमित्येतस्मिन्नक्षरे संसृ–
ज्यते यदा वै मिथुनौ समागच्छत
आपयतो वै तावन्योन्यस्य कामम् ।।६।।

सान्वय शदार्थ:– तत् = सो, एतत् = यह, मिथुनम् = जोड़ा, ओमित्येतस्मिन् = ॐ इस, अक्षरे = अक्षर में, संसृज्यते = संसृष्ट है, यदा = जब, वै = निश्यच, मिथुनौ = दोनों, समागच्छतः = संयुक्त होते हैं, वै = निश्चय, तौ = वह दोनों, अन्योन्यस्य = आपसके, कामम् = इच्छाओं को, आपयतः = पूरा करते है।

भावार्थ:– यह मिथुन रूप हुए वाक् तथा प्राण ॐ इस अक्षर में संयुक्त हुए है यह वाक् तथा प्राण रूप मिथुन जब आपस में मिलते हैं तभी एक दूसरे की अभिलाषा को पूरा करते हैं, इस तरह उनसे संयुक्त ओंकार समस्त अभिलाषा की प्राप्ति रूप गुण से परिपुष्ट होता है।

आपयिता ह वै कामानां भवति य
एतदेवं विद्वानक्षरमुद्गीथ मुपास्ते ।।७।

सान्वय शदार्थः– यः = जो, एवम् = इस प्रकार, विद्वान् = जाननेवाला, एतम् = इस, उद्गीथम् = ओंकार, अक्षरम् = अक्षर को, उपास्ते = उपासना करता है, वै ह = निश्चय, कामानाम् = अभिलाषाओं का, आपयिता = प्राप्त कराने वाला, भवति = होता है।

भावार्थः– जो इस प्रकार जानकर इस उद्गीथ की अक्षरोपासना करता है वह यजमान की अभिलाषाओं को पूरा करता है।

तद्वा एतदनुज्ञाक्षरं यद्धि किंचानुजाना
त्योमित्येव तदाहैषो, एव समृद्धिर्यदनुज्ञा
समर्धयिता ह वै कामानां भवति य
एतदेवं विद्वानक्षरमुद्गीथ मुपास्ते।। ८।।

सान्वय शदार्थः– वा = अथवा, तत्=वह, एतत् = यह, अनुज्ञाक्षरम् = अनुमति रूप अक्षर है, हि = क्योंकि, यत् किंच = जो कुछ, अनुजानाति = अनुमति देता है, ओम्, इत्येव = ॐ इसका उच्चारण कर ही, तत् = सो, आह = कहता है, यत् = जो, अनुज्ञा = अनुमति है, एषा एव = यह ही, समृद्धिः = समृद्धि है, यः = जो, एवम् = ऐसा, विद्वान् = जानने वाला, एतम् = इस, उद्गीथम् = ओंकार, अक्षरम् = अक्षर को, उपास्ते = उपासना करता है, वे ह = निश्चय, कामानाम् = कामनाओं का, समर्द्धयिता= पूरा करने वाला भवति = होता है।

भावार्थः– इस ओंकार को अनुमति देने को अक्षर कहा जाता

है, लोक में भी इस अक्षर का उच्चारण करके सभी विषयों में अनुमति देते हैं, ओम् का अपभ्रंश ही हां है, समृद्धि का कारण भूत अनुमति ही समृद्धि है, इसलिये समृद्धि गुणवाला मानकर ओंकार का कीर्तन किया जाता है, जो इस प्रकार जानकार इस ओंकार की उपासना करते हैं वे यजमान की अभिलाषाओं को सफल कर सकते है।

तेनेयं त्रयी विद्या वर्तत ओमित्या श्रा–
वयत्योमिति शंसत्योमित्युद्गायत्येत–
स्यैवाक्षरस्याप चित्यै महिम्ना रसेन ।।९।।

सान्वय शदार्थ:– तेन = उस ओंकार करके, इयम् = यह, त्रयीविद्या = तीनों वेदों की कर्मविधि, प्रवर्त्तते = प्रवृत्त होती है, ओम, इति = ॐ ऐसा कहकर, आश्रावयति = आश्रव करता है, ओम, इति = ओम ऐसा कहकर, शंसति = शंसन करता है, ओम इति = ओम् ऐसा कहकर, उद्गायति = उद्गान करता है, एतस्यएव = इस ही, अक्षरस्य = अक्षर की अपचित्यै = पूजा के लिये, महिम्ना = महिमाकर के, रसेन = रस करके, निष्पद्यते = निष्पन्न होता है।

भावार्थ:– ओम इस अक्षर का उच्चारण करके सभी वेद में बताये कर्मों को प्रांरभ किया जाता है, ओम का उच्चारण करके आश्रावण शंसन तथा उद्गान आदि यज्ञ के अंग रूप सकल कर्म होते है, वे समस्त कर्म परमात्मा के यजन के लिये है, ओंकार

परमात्मा की प्रतिमूर्ति है, इसलिये इन सब कर्मों के द्वारा ओंकार का यजन पूरा होता है, तथा इस ओंकार की महिमा तथा रससे ही यज्ञ सिद्ध होता है, यजन सिद्धि के मूल रूप ऋत्विज तथा यजमान आदि के सकल प्राण आंकार की ही महिमा है, तथा उनके मूलभूत हविष्य के व्रीहियवादिका रस ओंकार का ही रस है, कारण कि ओंकार का उच्चारण करके किये हुए यज्ञ, होमादि से आदित्य की उपासना होने ही वृष्टयादि के क्रम से प्राण और अन्न पैदा होते है।

तेनोभौ कुरूतो यश्चैतदेव वेद यश्च न
वेद। नाना तु विद्या चाविद्या च।
यदेव विद्यया करोति श्रद्धयोपनिषदा
तदेव वीर्यवत्तरं भवतीति खल्वेतस्यैवा–
क्षरस्योपव्याख्यानं भवति ।। १०।।

सान्वय शदार्थः– यः च = जो, एतत् = इसको, एवम् = ऐसा, वेद = जानता है, यहं च = जो, न = नहीं, वेद = जानता है, उभौ = दोनों, तेन = उससे, कुरूत = करते है, च = और, विद्या = विद्या, अविद्या, च = अविद्या भी, नाना = अलग अलग है सु = किंतु, यम् = जो, विद्यया एव = ज्ञानपूर्वक ही, श्रद्धया = श्रद्धा करके, उपनिषदा = उपनिषद् के योग करके, करोति = करता है, तत् एव = वह ही, वीर्यवत्तरम् = शीघ्रफल देने वाला, भवति = होता है, इति = इससे, खलु = निश्चय, एतस्य एव = इस ही, अक्षरस्य = अक्षर का, उपख्यानम् = यथोचित व्याख्यान, भवति = होता है,

भावार्थ :– जो ॐकार के इस तरह के तत्व को जानते है और जो उस को नहीं जानते है वह सब ही ॐकार के द्वारा कर्म का अनुष्ठान करते है, कर्म के अनुष्ठान के बिना फल की प्राप्ति नहीं होती है, कर्म का अनुष्ठान करने से ही उसका फल प्राप्त होता हे, उस कर्म को करने में ज्ञानी तथा अज्ञानी के किये कर्मफल में न्यूनता, अधिकता अवश्य ही होती है। ज्ञान से युक्त किये कर्म के फल से अज्ञान से कृत कर्म का फल अलग होता है, जो कर्म ज्ञान श्रद्धा तथा उपनिषद् में बताये हुये योग द्वारा किया जाता है, वह कर्म ही अधिकतर शीघ्र फल देने वाला होता है। शास्त्र में बहुत प्रकार से ॐकार की उपासना बतायी है, उन सभी को ॐकार की शास्त्र के अनुसार व्याख्या समझना, कारण कि अवच्छिन्न वैदिक संप्रदाय के अभाव में उचित व्याख्यन प्राप्त होना मुश्किल हो गया है, यहां तक जो विषय बनाया उसका संक्षिप्त अभिप्राय यह है कि उद्गाता नामक पुरोहित यज्ञ में सामगान का उच्चारण करता है, पद्य एवं गद्य रूप मंत्र को शास्त्रीय गान में आबद्ध करना ही सामगानका है, उद्गीथ का प्रणव इस सामगान के ही अंश है, स्वर अथवा वाक्य से इस सामगान एवं स्तोत्रादि का उच्चारण होता है।

स्वर अथवा वाक्य प्राणशक्तिका ही प्रकट होता है, कारण कि, प्राणवायु ही कंठ आदि स्थान में आघात पाकर वर्णरूप से प्रकट होता है, इस तरह प्राण में ॐकार से प्राणशक्ति के दर्शन

का उपदेश है तथा इस खण्ड में उसकी ही महिमा बतायी है।

। प्रथमाध्यायका प्रथम खण्ड संपूर्ण।

अथ प्रथमाध्यायस्य

द्वितीय खण्डः

देवसुरा ह वै यत्र संयेतिर उभये प्राजा–
पत्यास्तद्ध देवा उद्गीथमाजह्रुरनेनैनान
भिभविष्याम इति ।।१।।

सान्वय शदार्थः– ह = प्रसिद्ध है, वै = निश्चय, प्राजापत्याः = प्रजापति के पुत्र, देवासुराः = देवता और असुर, उभये = दोनो, यत्र = जिस विषय में, संयतिरे = संग्राम करते हुए तत् = उस विषय में, ह = प्रसिद्ध है, देवाः = देवता, अनेन एव = इस कर्म से ही, एनान् = इन असुरों को, अभिभविष्यामः = तिरस्कृत करेंगे, इति = इस कारण से, उद्गीथम् = उद्गीथ पूर्वक ज्योतिष्टोम आदि को, आजह्रुः = करते हैं।

भावार्थः– सभी सात्विक इन्द्रियों तथा उनकी सकल वृत्तियों की अधिष्ठात्री देवता तथा इनके विपरीत अर्थात् तमोरूप इन्द्रिय वृत्तियों के परिचालक असुर दोनों ही वैदिक क्रिया के अधिकारी कश्यप प्रजापति के पुत्र है, इस संसार मे जैसे भाई भाई से आपस में विरोध करते है वैसे ही देवता असुर भी परस्पर विरोध करते, वे आपस में एक दूसरे का अपमान करने के लिये हमेशा युद्ध में तैयार रहते थे। एक समय

देवताओं ने अपने विरोधी असुरों को पराजित करने की इच्छा से ॐकार का उच्चारण करके ज्यो तिष्टोमादि कर्मानुष्ठान किया उन्होंने मन में विचारकिया कि हम इस कर्म से ही असुरों का तिस्कार करेंगे।

ते ह नासिक्यं प्राणमुद्गीथमुपासांचक्रिरे
तँ हासुराः पाप्मनः विविधुस्तस्मात्ते–
नोभयं जिघ्रति सुरभि च दुर्गन्धि च
पाप्मना ह्येष विद्ध इति ।।२।।

सान्वय शदार्थः– ह = प्रसिद्ध है, ते = वे, नासिक्यम् = नासिका के, उद्गीथम् = उद्गीथकर्त्ता, प्राणम् = प्राण की, उपासांचकिरे = उपासना करते हुए, तम् ह = उसको, असुराः, असुर पाप्पना = पाप से, विविधुः = वेधन करते हुए, तस्मात् = उस कारण से, तेन = उस, पाप्मना = पाप से, विद्धः = विधा हुआ, एषः = यह, हि = निश्चय, सुरभि च = सुगन्धि को भी, दुर्गन्धि च = दुर्गन्धि को भी, जिघ्रति = सूंघता है।

भावार्थः– उद्गीथ से उपलक्षित यज्ञ कर्म के अनुष्ठान में प्रवृत्त होकर देवताओं ने पहले नासा इन्द्रिय को ही अपनी मनोरथ सिद्धि के अनुकूल समझकर उसके साथ एकत्व की दृष्टि से उद्गीय नामक प्रणव का आश्रय करके उस इन्द्रिय की कल्याण कारिणी संपूर्ण वृत्तियों का प्रकाश करने की चेष्टा की, यह देखकर असुरों ने मत्सरता में भर कर अपने स्वभाव सिद्धा अधर्मा संगरूप पाप से घ्राणेन्द्रिय को विद्ध करके उसमें गंध को ग्रहण करने के अभिमान रूप दोष को

उत्पन्न कर दिया, इस कारण तबसे घ्राणेन्द्रिय ने उस पाप से विद्ध होकर सुगान्ध के समान दुर्गन्ध को भी ग्रहण करना आरम्भ कर दिया।

अथ ह वाचमुद्गीथमुपसांचक्रिरे ताँ हासुराः पाप्मना विविधुस्तमतस्मात्तयो-भयं वदति सत्यं चानृतं च पाप्मना ह्येषा विद्धा ॥३॥

सान्वय शदार्थः— अथ ह = इसके अनन्तर, वाचम् = वाक् स्वरूप, उद्गीथ को, उपासांचक्रिरे = उपासना करते हुए, असुराः,ह = असुर, ताम् = उसको, पाप्पना = पाप से, विविधुः = वेधते हुए, तस्तात् = तबसे, तथा उठकर के, सत्यम् च = सत्यको, अनृतम् च = असत्य को भी, उभयम् = दोनों को, वदति = कहता है, हि = क्योंकि, एषा = यह, पाप्मना = पाप से, विद्धा विद्ध है।

भावार्थ:— इसके पश्चात् देवताओं ने वाक् इन्द्रिय के साथ ऐक्य दृष्टि से उद्गीथ नामक प्रणव का आश्रयकर के उस इंद्रिय की कल्याणकारिणी समस्त वृत्तियों को प्रकाशित करने की चेष्टा की, असुरों ने उस वाक् इन्द्रिय को पाप से विद्ध करके उसमें भी दोष पैदा कर दिया, इस कारण से तभी से वाक् इन्द्रिय में उस पाप से विद्ध होकर सत्य के समान असत्य को भी ग्रहण करना प्रारम्भ कर दिया।

अथ ह चक्षुरुद्गीथमुपासांचक्रिरे तद्धा-सुराः पाप्मना विविधुस्तस्मात्तेनोभयं

पश्यति दर्शनीयं चादर्शनीयं च पाप्मना

ह्येतद्विद्धम् ॥४॥

<u>**सान्वय शदार्थ:–**</u> अथ ह = अन्तर, चक्षुः = चक्षु से उपलिक्षत, उद्गीथम् = ॐकार को, उपासांचक्रिरे = उपासना करते हुए, असुराः = असुर, तत् ह = उसको भी पाप्मना = पाप से, विविधुः = वेध ते हुए, तस्मात् = उससे, तेन = उसके द्वारा, दर्शनीयम् च = देखने योग्य भी, अदर्शनीयम् च = न देखने योग्य को भी उभयम् = दोनो को, पश्यति = देखता है, हि = क्योंकि, एतत् = यह, पाप्मना = पाप से, विद्ध म् = विद्ध है।

<u>**भावार्थ:–**</u> तदनन्तर देवताओं ने चक्षु इन्द्रिय के संग एक त्व दृष्टि से प्रणवकाआश्रय करके इन्द्रिय की कल्याणकारिणी सभी वृत्तियों को प्रकाशित करने की चेष्टा की, असुरो ने इस चक्षु इन्द्रिय को भी पाप से युक्तकर के इसमें दोषों को पैदा कर दिया। इस कारण तभी से चक्षु उस पाप से मुक्त होकर देखने योग्य पदार्थ के समान नहीं देखने योग्य विषय को भी ग्रहण करने लगा।

अथ ह श्रोत्रमुद्गीथ मुपासांचक्रिरे तद्धा–

सुराः पाप्मना विविधुस्तस्मात्तेनोभय

शृणोति श्रवणीयं चाश्रवणीयं च

पाप्मना ह्येतद्विद्धम् ॥ ५॥

<u>**सान्वय शदार्थ:–**</u> अथ ह = इसके पश्चात्, श्रोत्रम् = श्रोत्रोपलक्षित,

उद्गीथम् = प्रणव को, उपासांचक्रिरे = उपासना करते हुए, असुराः = असुर, तत् ह = उसको भी, पाप्मना = पाप से, विविधुः = वेधते हुए, तस्मात् = उससे, तेन = उसके द्वारा, श्रवणीयं च = श्रवण योग्य को भी, अश्रवणीयम् च = न सुनने योग्य को भी, उभयम् = दोनों को, श्रृणोति = सुनता है, हि = क्योंकि, एतद् = यह, पाप्मना = पाप से, विद्धम् = विद्ध है।

भावार्थः– इसके पश्चात् देवताओं ने श्रवणेन्द्रिय के संग एकत्व दृष्टि के प्रणव का आश्रय लेकर के उस इन्द्रिय की कल्याण कारिणी सभी वृत्तियों को प्रकाशित करने की चेष्टा की, तब असुरों ने इस श्रवणेन्द्रिय उस पाप से विद्ध होकर श्रवण योग्य विषय के सदृशन सुनने योग्य विषय को श्रवण करने लगा।

अथ ह मन उद्गीथमुपासांचक्रिरे तद्धा–
सुराः पाप्मना विविधुस्तस्मात्तेनोभयं
संकल्पयते संकल्पनीयं चासंकल्पनीयं
च पाप्मना ह्येतद्विद्धम्।। ६।।

सान्वय शदार्थः– अथ ह = अनन्तर, मनः = मन उपलक्षित, उद्गीथम् = प्रणव को, उपासांचक्रिरे = उपासना करते हुए, असुराः = असुर, तद्, ह = उसको भी, पाप्मना = पाप से, विविधुः = वेधते हुए, तस्मात् = उससे, तेन = उसके द्वारा, संकल्पनीयम् च = संकल्प करने योग्य को, असंकल्पनीयम् च = संकल्प न करने योग्य को भी, उभयम् = दोनों को, संकल्पय ते= आलोचना करता है, हि = क्योंकि, एतत् = यह, पाप्मना

= पाप से, विद्धम् = विधा हुआ है।

भावार्थ:– इसके पीछे देवताओं के मन के संग एकत्व दृष्टि कर प्रणव के आश्रय से उस इन्द्रिय की कल्याण कारिणी सभी वृत्तियां को प्रकाशित करने की चेष्टा की, असुरों ने इस मन को भी पाप से युक्त कर के इसमें दोष पैदा कर दिये, इस कारण तब से मन इस तरह पाप से विद्ध होकर संकल्प करने योग्य विषय के समान संकल्प नहीं करने योग्य विषय की भी आलोचना करने लगा।

> **अथ ह य एवायं मुख्यः प्राणस्तमुद्गी–**
> **थमुपासांचक्रिरे तँ हासुरा ऋत्वा**
> **विदध्वंसुर्यथाश्मानमाखणमृत्वा विध्वं–**
> **सेत ॥ ७॥**

सान्वय शदार्थ:– अथ ह = अनन्तर, यः = जो, मुख्यः = मुख्य, एव = ही, प्राणः = प्राण है, तम् = उस, उद्गीथम् = उद्गीथ को, उपासांचक्रिरे = उपासना करते हुवे, असुराः = असुर, तम्, ह = उसको भी, ऋत्वा = प्राप्त होकर, यथा = जैसे, आखणम् = खनन करने के आयोग्य, अश्मानम् = पाषाण को, ऋत्वा = प्राप्त होकर, विर्ध्वंसमे = विदीर्ण होता है, तथा = वैसे, विदध्वंसुः = विनष्ट हो गये

भावार्थ:– अन्त म देवताओं ने इन्द्रिय समूह रूप संपूर्ण गौण प्राणों को त्यागकर, इन्द्रिय समूह रूप तथा वायु विकार रूप प्राण जिसकी जड शक्ति है, तथा क्रियाशक्ति रूप प्राण जिसकी चित् शक्ति है उस परमात्मा नामक मुख्य प्राण का ही प्रतिरूप

मानकर उद्गीथ नामक प्रणव का आश्रय लिया, असुरों ने इस मुख्य प्राण को भी पाप संयुक्त करने के लिये इच्छा की परन्तु उसको पाप युक्त करने में असमर्थ होकर जैस न स्वयं न सरकने वाले कठिन पाषाण को खोदने में उद्यत काष्ठ अपने आप ही नष्ट हो जाता है वैसे ही इच्छामात्र से ही अपने आप ही समाप्त हो गये।

एवं यथाऽश्मान माखणमृत्वा विध्वंसत
एवं हैव स विध्वं सत य एवंविदि
पापं कामयते यश्चैनमभिदासति स
एषोऽश्माखणः ।।८।।

__सान्वय शदार्थ:__— एवम् = इस तरह, यथा = जैसे, आखणम् = खनन के अयोग्य, अश्मानम् = पत्थर को, ऋत्वा = प्राप्त होकर, विध्वंसते = नष्ट होता है, एवम् एव = ऐसे ही, सः = वह, विध्वंसते = नष्ट होता है, यः = जो, एवम् विदि = ऐसा जानने वाले में पापम् = पाप को, कामयते में चाहता है, च = और, य, जो, एनम् = इसको, अभिदासति = हिंसा करता है, सः = वह एषः = यह आखणः : अखननीय, अश्मा = पाषाणवत् है।

__भावार्थ:__—मुख्यप्राण को जो ऐसे गुण वाला जानता है, उसमें पाप संयोग करने के लिये जो इच्छा करता है वह खनन के अयोग्य पत्थर घर्षण से नष्ट हुए काष्ठ आदि के समान स्वयं ही विनष्ट हो जाता है तथा उस प्राण के ज्ञाता की हिंसा करता है

वह भी विनष्ट हो जाता है, कारण कि प्राणज्ञ और खनन के अयोग्य पत्थर दोनों एक सदृश है।

नैवेतेन सुरभि न दुर्गन्धि विजानात्य-
पहतपाप्मा ह्येष तेन यदश्नाति यत्पि-
बति । तेनेतरान्प्राणानवति। एतमु
एवाऽन्ततोऽवित्त्वोत्क्रामति व्याददात्ये
वान्तत इति ॥९॥

<u>सान्वय शदार्थ:-</u> एतेन = इसके द्वारा, सुरभि = सुगंधि को, नैव = नहीं, दुर्गन्धि = दुर्गन्धि को, न = नहीं, विजानाति = जानता है, हि = क्योंकि, एष: = यह, अपहतपाप्मा = पाप के स्पर्श से रहित है, तेन = उसके द्वारा, यत् = जो, अश्नासि = खाता है, यम् = जो पिबति = पीता है, तेन = उससे, इतरान् = और, प्राणान् = प्राणों को, अवति = पालेता है, एवम्, उ = इस प्रकार ही, अन्त: = अन्तसमय, अवित्वा एवं = न पाकर ही, उत्कामति = प्राण त्यागता है, इति = इस कारण = अन्तत: = अन्तकाल में, व्याददति = एव = अवश्य मुख को फैलाता है।

<u>भावार्थ:-</u>यह मुख्य प्राण पाप के स्पर्श से रहित है, इसलिये विशुद्ध है, विशुद्ध मुख्य प्राण के द्वारा सुगन्धि अथवा दुर्गन्धि कुछ नहीं जानी जाती, विशुद्ध मुख्य प्राण सुगन्धि और दुर्गन्धि को सूंघने से, घ्राणेन्द्रिय का प्रेरक होकर भी उसके दोष से लिप्त नहीं होता, वह अन्य इन्द्रियों के समान आत्मम्भरी नहीं,

परन्तु विश्वभर है वह भोजन आदि के द्वारा सब इन्द्रियों का पोषण करता है, भोजन पान मुख्य प्राण की वृत्ति है, यदि मुख्य प्राण भोजन पान आदि नहीं करे तो प्राणी का अन्तकाल हो जाता है, उस समय मुख्य प्राण वृत्ति के भोजन पान आदि न पाने से ही दूसरी सभी इन्द्रियां शरीर को छोड देती है, प्राण को शरीर त्याग से पहले भोजन की इच्छा देखी जाती है, इसलिये उस समय प्राणी का मुख फैल जाना प्रसिद्ध ह।

तँ हाङ्गिरा उद्गीथमुपासां चक्र एतमु
एवांङ्गिरसं मन्यतेऽङ्गानां यद्रस:।। १०।।

सान्वय शदार्थ:– अंगिरा = अंगिरा ऋषि, तमह = उस ही, उद्गीथम् = उद्गीथ को, उपासांचक्रे = उपासना करता हुआ, एतम् = इसको, अंगिरसम् = अंगिरा संबंधी, मन्यते = मानते है, यम् = क्योंकि, अंगानाम् = अंगों का, रस: = सार है।

भावार्थ:– अंगिरा नाम के ऋषि ने इस तरह मुख्य प्राण को उद्गीथ मानकर ओंकार की उपासना की थी, आंगिरा आदि, ऋषियों ने इस तरह मुख्य प्राण के साथ अभेद बुद्धि से ॐकार की उपासना की थी, इसी से उनके नाम से मुख्य प्राण का नाम सुना जाता है, श्रुति में मुख्यप्राण का एक नाम आंगिरस भी कहा है, आंगिरस शब्द की व्युत्पत्ति से यह अर्थ होता है, कि अंगों का रस प्राण ही अंगों का रस अर्थात् सार है, इसलिये अंगिरस शब्द का अर्थ 'प्राण' है।

तेन तँ बृहस्पति रुद्गीथ मुपासांचक्र एतमु ह

एव बृहस्पति मन्यन्ते वाग्धि बृहती तस्या एष पति :॥११॥

सान्वय शदार्थ :– बृहस्पतिः = बृहस्पति = ऋषि, तम ह = उस ही, उद्गीथम् = प्रणव को, उपासां चक्रे = उपासना करता हुआ, तेन उससे एतम् उ एव = इसको ही, बृहस्पतिम् = बृहस्पति, मन्यन्ते = मानते है, हि = क्योंकि, वाक् = वाणी, बृहती = बृहती है, तस्याः = उसका, एषः = यह, पतिः = पति है।

भावार्थ :– इसी तरह बृहस्पति ने मुख्य प्राण दृष्टि से ॲंकार की उपासना की थी, तदनुसार मुख्य प्राण को भी बृहस्पति शब्द से कहा है, वाक् ही बृहती है और प्राण उसका पति है।

तेन तँ हाऽऽयास्य उद्गीथमुपासांचक्र
एतमु एवा ऽऽ यास्यं मन्यन्त आस्याद्य–
दयते ॥१२॥

सान्वय शदार्थ :– अयास्य = अयास्य ऋषि, तम ह = उसही, उद्गीथम् = प्रणव को, उपासांचक्रे = उपासना करता हुआ, तेन = उससे, एतम्, उ, एव = इसको ही आस्यात् = मुख से, अयते = निकलता है।

भावार्थ :– इसी तरह अयास्य ऋषि ने मुख्य प्राण दृष्टि से प्रणव की उपासना की, उसके ही अनुसार मुख्य प्राण को भी आयास्य शब्द से कहा जाता है, आस्य अर्थात् मुख से निकलना है, इसलिये ही मुख्यप्राण को अयास्य कहते है।

तेन तँ ह बको दाल्भ्यो विदांचकार।
सह नैमिशीयाना मुद्गाता बभूव सह

स्मैभ्य: कामानागायति ।। १३ ।।

सान्वय शदार्थ:– दाल्भ्य: = दल्भ का पुत्र, बक: = बक ऋषि, तम्, ह = उसको, विदांचकार = जानता हुआ, तेन = उससे, स: = वह, नेमिषीयानाम् = नैमिषारण्यवासियो का, उद्गाता = उद्गान कर्म करने वाला, बभूव ह = हुआ, स: = वह, एभ्य: = इनके अर्थ, कामान् = मनोरथों को आगायति, स्म, ह = गान करता था।

भावार्थ:– इसी तरह द्ल्भ के पुत्र बकने प्रणव को प्राण रूप से जाना था, इस कारण वह नैभिषारण्य में रहने वाला यज्ञ कर्त्ताओं का उद्गाता हुआ तथा उसने उनकी इच्छा प्राप्ति के लिये उद्गान नामक कर्म किया।

आगाता ह वै कामनां भवति य एत–
देवं विद्वानक्षर मुद्गीथमुपास्त इत्य–
ध्यात्मम् ।।१४।।

सान्वय शदार्थ:– य: = जो, एतद् = इसको, एवम् = ऐसे, विद्वान् = जानने वाला, उद्गीथम् = प्रणव, अक्षरम् = अक्षर को, उपास्ते उपासना करता है, वै = निश्चय, कामानाम = मनोरथों का, अगाता = गान करने वाला, भवति है = अवश्य होता है।

भावार्थ:– जो इस तरह जानकर इस ॐकार अक्षर की उपासन करता है वह उद्गान के द्वारा यजमान के मनोरथों को पूरा कर सकता है यह अध्यात्म अर्थात् आत्मविषयक ॐकार की उपासन कही है।

।।प्रथमाध्याय का द्वितीय खण्ड संपूर्ण।।

अथप्रथमाध्यायस्य

तृतीय खण्डः

अथाधिदैवतम्, य एवासौ तपति तमुद्गी–
थमुपासीतोद्यन्वा एष प्रजाभ्य उद्गा–
यति उद्यंस्तमोभयमप हन्त्यपहन्ता ह वै
भयस्य तमसो भवति य एवं वेद ।। १।।

सान्वय शदार्थः– अथ = अब, अधि दैवतम् = अधिदैवत कहते है, यः जो, असौ = यह, तपति = तपता है, तम् एव = उस ही, उद्गीथम् = प्रणव को, उपासीत = उपासना करे, एषः = यह, उद्यन् वा = उदय होता हुआ ही प्रजाभ्यः = प्रजाओं के लिये , उद्गायति = उद् गान करता है, तमोभयम् = अन्धकार के भय को, उपहन्ति = दूर हटाता है, यः जो, एवम् = ऐसा, वेद = जानता है, वे = निश्चय, भयस्य = भयका, तसमः = तमका, अपहन्ता = नाशक, भवति, ह = होता ही है

भावार्थः– अब अधिदेव दृष्टि से प्रणव की उपासना बताते है, यह जो आदित्य पृथिवी को तापदेता है, यही उद्गीथ है, आदित्य दृष्टि से उद्गीथ की उपासना करना चाहिये यह आदित्य उदित होकर सभी प्रज्ञाओं को अन्न प्राप्ति के हेतु उद् गानकर्म को पूरा करता है, यदि आदित्य का उदय नहीं हो तो अन्नादि का पाक नहीं हो, इसलिये उनका उदय उद्गाता के समान है, आदित्य उदय होकर प्रजाओं के भय और अन्धकार को हटाता है, जो ऐसे गुण वाले आदित्य को जानता है वह सभी के अन्धकार तथा भय का नाश करता है।

समान एवायं चासौ चोष्णोऽयमुष्णो-
ऽसौ स्वर इतीममाचक्षते स्वर इति
प्रत्यास्वर इत्यमुं तस्माद्वा एतमिम-
ममुं चोद्गीथ मुपासीत ।। २।।

सान्वय शदार्थः– समानः, उ, एव = समान ही है, अयंच = यह सूर्य और, असौ, च = यह प्राण भी, अयम् = यह, असौ = यह, उष्णः = उष्ण है, स्वरः इति = ताप देता है, इस कारण, इयम् = इसको, स्वरः इति = स्वर इस नाम से, आचक्षते = कहते है, अमुम = इस को प्रत्यास्वर इति = प्रत्यास्वर इस नाम से कहते है, तस्मात् = उससे, एतम् अमुम् = इसको, उद्गीथम् = प्रणव की, उपासना करे।

भावार्थः– यह आदित्य एवं यह प्राण दोनों गुण में सदृशही है, ताप देने के कारण प्राण को स्वर कहते है तथा ताप देता है इसलिये ही आदित्य को प्रत्यास्वर कहते हैं इसका कारण प्राण दृष्टि से और आदित्य दृष्टि से उद्गीथ की उपासना करे।

अथ खलु व्यानमेवोद्गीथमुपासीत यद्वै।
प्राणिति स प्राणो यदपानिति सोऽपा-
नोऽथ यः प्राणपानयोः सन्धिः स
व्यानो यो व्यानः सा वाक् तस्मादप्रा-
णन्ननपानन्वाचमभिव्या हरति ।।३।।

सान्वय शदार्थः– अथ = अननार, रवलु = निश्चय, व्यानम्, एव = व्यान को ही उदगीथम = प्रणवरूप से, उपासीत =

उपासना करे, यम् = जो, वै = निश्चय प्राणिति = मुख नसिका से वायु छोडता है, सः = वह, प्राणः = प्राण है, यत् = जो, अपानिति = वायु को ग्रहण करता है, सः = वह, अपानः = अपान है, अथ = और, यः = जो, प्राणापानयोः प्राण और अपान का, सन्धिः = मेल है, सः = वह, वाक् = वाणी है, तस्मात् = उससे, अप्राणन् = प्राण का व्यापार नहीं करता हुआ, अनपानत् = अपान का व्यापार नहीं करता हुआ, वाचम् = वाणी को, अभि व्याहरति = उच्चारण करता है।

भावार्थ:– पश्चात् व्यान दृष्टि से प्रणव की उपासना करे, जीव मुख तथा नासिका से जिस वायु को छोडता है उसका नाम प्राण और जिस वायु को ग्रहण करता है उसका नाम अपान है, और जिसमें प्राण तथा अपान का मेल होता है उसको व्यान कहते है तथा जिसको व्यान कहते है उसी को वाक् कहते हैं, इसलिये सब जन प्राण और अपान का व्यापार नहीं करके ही वाक्य का उच्चारण करते है।

या वाक्सर्क्क स्माद्प्राणन्ननमपानन्नृचम–
भिव्याहरति यर्क्तत्साम तस्मादप्राणन्न–
नपान्नसाम गायति यत्साम स उद्गी–
थस्तस्माद्प्राणन्ननपानन्नुद्गायति।।४।।

सान्वय शदार्थ:– या = जो, वाक् = वाणी है, सा = वह, ऋक् = ऋक् है, तस्मात् = उससे, अप्राणन् = प्राण व्यापार करता हुआ, अनपानत् = अपान का व्यापार नहीं करता हुआ, = ऋचम् = ऋचा को, अभिव्याहरति = उच्चारण करता है, या =

जबओ, ऋक् = ऋचा है, तत् = वह, साम = साम है, तस्मात् = उससे अप्राणम् = प्राण व्यापार नहीं करता हुआ, अनपानन् = अपान व्यापार नहीं करता हुआ, साम = साम को गायसि = गाता है, यत् = जो, साम = साम है, सः = वह, उद्गीथ = उद्गीथ है, तस्मात् = उससे, अप्राणन् = प्राण व्यापार नहीं करता हुआ, अपानन् = अपान व्यापार नहीं करता हुआ, उद्गायति = उद्गान करता है।

भावार्थ:– जो वाक् है यह चाहे, इस कारण सभी जन प्राण व्यापार तथा अपान व्यापार नहीं करके ही ऋचा का उच्चारण करते है, जो ऋचा है वह साम है, इसलिये सब लोग प्राण अपान का व्यापार नहीं करके ही साम का गान करते है, जो साम है वह ही उद्गीथ है, इस कारण सभी लोग प्राण का तथा अपान का व्यापार नहीं करके ऊंचे स्वर से गान करते हैं।

अतो यान्यन्यानि वीर्यवन्ति कर्माणि
यथाग्नेर्मन्थनमाजेः सरणं दृढस्य धनुष
आयमनमप्रमाणन्ननपान ँ स्तानि करो–
त्येतस्य हेतोर्व्यानमेवोद्गीथमुपास्ते ॥५॥

सान्वय शदार्थ:– अतः = इससे, अन्यानि = और, यानि = जो, वीर्यवन्ति = परिश्रम साध्य कर्माणि = कर्म है, यथा = जैसे, अग्नेः = अग्निका, मन्थनम् = मथना, आजेः = सीमा का, सरणम् = लांघना, दृढस्य = दृढ, धनुषः = धनुष का, आयमनम् = खींचना, अप्राणन् = प्राण व्यापार नहीं करता हुआ, अनपानन् = अपान व्यापार नहीं करता हुआ, करोति =

करता है, एतस्य, हे तो = इस कारण से, व्यानम् एव व्यान को ही उद्गीथम् = प्रणव दष्टि से, उपासीत = उपासना करे।

भावार्थ:– इसलिये और जो सब अधिक परिश्रम से सिद्ध होने वाला कार्य करते है, जैसे अग्नि का मंथन करना, सीमा को लांघना तथा दृढ धनुष को खींचना, आदि इनको सभी लोग प्राण व्यापार तथा अपान की क्रिया न करते हुए भी करते है, अत एव व्यान की दृष्टि से ही प्रणव की उपासना करे।

अथ खलूद्गीथाक्षराण्युपासीतोद्गीथ इति
प्राण एवोत्प्राणेन ह्युत्तिष्ठति वाग्गी–
र्वाचो ह गिरः इत्याचक्षतेऽन्नं थमन्ने
हीदँ सर्वँ स्थितम् ।।६।।

सान्वय शदार्थ:– अथ = अनन्तर, उद्गीथाक्षराणि एव = उद्गीथ के अक्षरों को ही, उद्गीथ इति = प्रणव दृष्टि से, उपासीत = उपासना करे, प्राणः एव = प्राण ही उत् = उत् है, हि = क्योंकि, प्राणेन, एव = प्राण से ही, उत्तिष्ठति = उठता है, वाक् = वाणी, गोः = गो है, वाचः ह = वाणियों को, गिरः इति = गो शब्द से, आचक्षते = कहते है, अन्नम् = अन्न, थम् = थ है, हि = क्योंकि, इदम् = यह, सर्वम् = सब, अन्ने = अन्न में, स्थितम् = स्थित है।

भावार्थ:– इसके पश्चात् उद्गीथ के सभी अक्षरों को उद्गीथ दृष्टि से उपासना करे प्राण उत् है, क्योकि पुरूष प्राण के द्वारा उठता है, वाक् ही गी है, क्योंकि वाणी को सभी गीः शब्द से उच्चारण करते है तथा अन्न ही थ है क्योंकि अन्न में ही यह सब विश्व स्थित है।

द्यौरेवोदन्तरिक्षं गीः पृथिवी थमादित्य एवोद्वायुर्गीरग्निस्थँ सामवेद एवोद्यजु- र्वेदो गीः ऋग्वेदस्थं दुग्धेऽस्मै वाग्दोहं यो वाचो दोहोऽन्नवा नन्नादो भवति य एतान्येवं विद्वानुद्गीथाक्षराण्युपास्त उद्गीथ इति ।।७।।

__सान्वय शदार्थः__— द्यौः, एव = स्वर्ग ही, उत् = उत् है, अन्तरिक्षम् = अन्तरिक्ष,गीः = गी है, पृथिवी = पृथिवी, थम् = थ है, आदित्यः एव = आदित्य ही, उत् = उत् है, वायुः = वायु, गीः = गी है, अग्निः = अग्नि, थम् = थ है, सामवेदः एव = सामवेद ही उत् = उत् है, युजर्वेदः = यजुर्वेद, गीः = गी है, ऋग्वेदः = ऋग्वेद, थम् = थ है = एतानि = इनको, एवम् = ऐसा, विद्वान् = जानने वाला, यः = जो, उद्गीथाक्षराणि = उद् गीथ के अक्षरों का, उद्गीथः इति = उद्गीथ इस दृष्टि से, उपास्ते = उपासना करता है, अस्मै = इसके लिये, वाग्दोहम् = वेद के अध्ययन के फल को, दुग्धे = दुहता है वाचोदोहः = वाग्दोह के फल वाला, अन्नवान् = अन्नवाला, अन्नादः = अन्न का भोक्ता, भवति = होता है।

__भावार्थः__— स्वर्ग ही उत्, अन्तरिक्ष गी और पृथिवी थ है, सामवेद ही उत् यजुर्वेद गी और ऋग्वेद थ है। जो इस तरह जानकर इन सभी उद्गीथ के अक्षरों की प्रणव दृष्टि से उपासना करता है, वाणी उस साधक के लिये ऋग्वेदादि शब्द साध्य फल को देती है वह अन्नवान् और अन्नभोक्ता भी होता है।

अथ खल्वाशी: समृद्धिरूपसरणानीत्यु–

पासीम येन साम्ना स्तोष्यन्स्यात्तत्सा–

मोपधावेत्॥८॥

सान्वय शदार्थ:– अथ = अनन्तर, खलु = निश्चय, आशी: समृद्धि: = फल संपत्ति कही जाती है, उपसरणि = ध्यान योग्यों को, इति = प्रणव है ऐसा, उपासीत = उपासना करे, येन = जिस, साम्ना = सामकस के, स्तोष्यन् = स्तुति करने वाला हो, तत् = उस, साम = साम को, उपधावेत् = चितवन करे।

भावार्थ:– अब फल संपत्ति कहते है, कि ध्यान करने योग्य समझकर उद्गीत की उपासना करे, प्रथम जिस साम से स्तुति करनी होगी, उद्गाता उस साम का ध्यान करे।

यस्यामृचि तामृचं यदार्षेयं तमृषिं यां

देवतामभिष्टोष्यन्स्यात्तां देवतामुपधा

वेत् ॥९॥

सान्वय शदार्थ:– यस्याम् = जिस, ऋचि = ऋचा में हो, ताम् = ऋचम् = उस ऋचा को, यम् आर्षेयम् = जिस ऋषि वाला हो, तम् ऋषिं = उस ऋषि को, याम् देवताम् = जिस देवता को, अभिष्टोष्यन्, स्यात् = स्तुति करता हो, ताम् देवताम् = उस देवता को, उपधावेम् = चिन्तवन करे।

भावार्थ:– तदनन्तर वह साम जिस ऋचा के अन्तर्गत हो उस ऋचा को उस साम का जो ऋषि को तथा जिस देवता की स्तुति करनी हो, उस देवता का चितवन करे।

येन च्छन्दसा स्तोष्यत्स्यात्तच्छन्द उप-

धावेद्येन स्तोमेन स्तोष्यमाणः स्यात्तँ

स्तोममुपधावेत् ।।१०।।

सान्वय शदार्थः– येन =जिस, छन्दसा = छद करके, स्तोष्यन् स्यात् = स्तुति करने वाला हो ततः छंन्द = उस छन्द को, उपधावेत् = चिन्तवन करे, येन = जिस, स्तोमेन = स्तोम से, स्तोष्यमाणः, स्यात् = स्तुति करने वाला हो, तम् = उस, स्तोमम् = स्तोम को, उपधावेत् = चिन्तवन करे।

भावार्थः– गायत्र्यादि की जिस छन्द से स्तुति करना हो उस छन्द का ध्यान करे तथा जिस स्त्रोत से स्तवन करना हो उस स्त्रोम का ध्यान करें।

मां दिशमभिष्टोष्यन्स्यात्तां दिशमुपधावेत्।।११।।

सान्वय शदार्थः– याम =जिस, दिशम् = दिशा को, अभिष्टोष्यन् = स्तुति करने वाला स्यात् = हो, ताम् = उस, दिशम् = दिशा को, उपधावेत् = चिन्तवन करे।

भावार्थः– जिस दिशा की स्तुति करनी हो उस दिशा का ध्यान करें

आत्मानमन्तत उपसृत्य स्तुवीत कामं

ध्यायन्नप्रमत्तोऽभ्याशो ह यदस्मै स

कामः समृद्ध येत यत्कामः स्तुवीतेति

यत्कामः स्तुवीतेति ।।१२।।

सान्वय शदार्थ:– अन्ते = अन्त में, आत्मानम् = अपने को, उपसृत्य = चिन्तवन करके, कामम् = अभिलषित को, ध्यायन् = ध्यान करता हुआ, अपमत्तः = स्वरादि में प्रमाद नहीं करता हुआ, अभ्यासः = शीघ्र, स्तुवीत् = स्तुति करे, यम् = जिससे, सः वह, कामः अभिलषित, अस्मै = इसके लिये, समृद्धयेत् = समृद्धि को प्राप्त हो, यत्कामः जिस इच्छावाला स्तुवीत = स्तुति करे, इति = इस तरह।

भावार्थ:– अन्त में अपने को चितवन करके अपेक्षित फल का स्मरण तथा अनुसंधान करते करते सावधानी से स्तुति करे उस कार्य में उसको जल्दी ही उस फल को प्राप्त करेगा।

।। प्रथमाध्याय का तृतीय खण्ड संपूर्ण ।।

अथप्रथमाध्यायस्य

चतुर्थ खण्डः

ओमित्येतदक्षरमुद्गीथ मुपासीतोमिति
ह्युद्गायति तस्योपव्याख्यानम् ।।१।।

सान्वय शदार्थ:– ओमिति एतत् = ओम इस, अक्षरम् = अक्षर, उद्गीथम् = उद्गीथ को, उपासीत = उपासना करे, हि = क्योंकि, ओमिति = ओम् ऐसा, उद्गायति = उद्गान करता है, तस्य = उसका, उप व्याख्यानम् = वर्णन है।

भावार्थ:– ओम इस अक्षर की उद्गीथ दृष्टि से उपासना करे,

ओंकार का उच्चारण करके विभूति वर्णन ही उसकी उपासना है।

देवा वै मृत्योर्बिभ्यतस्त्रयीं विद्यां प्रवि–
शं स्ते छन्दोभिरच्छादयन्यदेभिरच्छा–
दयं स्तच्छंदसां छन्दस्त्वम्।।२।।

सान्वय शदार्थ :– देवाः = देवता, मृत्यो = मृत्यु से, बिभ्यतः = डरते हुए, त्रयीम्विद्याम् = त्रयी विद्या को कर्म में, प्राविशन् = आरम्भ करते हुए, ते = वे, छन्दोभिः = छन्दो से, आच्छादयन् = आच्छादन करते हुए, यत् = जो, एभिः = इनसे, आच्छादयन् = आच्छादन करते हुये, तत् = वह, छन्दसाम् = छन्दों का, छन्दस्त्वम् = छन्दपना

भावार्थ :– देवताओं ने मृत्यु से डरकर तीनो वेदो में बताये हुए कर्म को प्रारम्भ किया, उन्होंने छन्द अर्थात् कर्म में विनियोग रहित मंत्रों से अपने को आच्छादित किया, उन्होंने ऐसा किया था इस कारण ही सब मंत्रो का छन्द नाम हुआ है।

तानु तत्र मृत्युर्यथा मत्स्यमुदके परिप–
श्येदेवं पर्यपश्यदृचि साम्नि यजुषि।
ते नु वित्तोर्ध्वा ऋचःसाम्नो यजुषः स्वर–
मेव प्राविशन्।।३।।

सान्वय शदार्थ :– यथा = जैसे, घातकः = घातक, उदके =

जल में, मत्स्यम् = मत्स्य को, परिपश्येत् = देखे, एवम्, उ = ऐसे ही, मृत्युः = मृत्यु, तत्र = वहां, ऋषि = ऋक् में, साम्नि = साम में, यजुषि = यजु में, तान् = उन देवताओं को, पर्यपश्यत् = देखता हुआ, ते, नु = वह देवता, विस्वा = जानकर, ऋचः = ऋक् से, साम्नः = सामसे, यजुः = यजु से, ऊर्ध्वाः = उठे हुए, स्वरम् एव = अक्षर को ही, प्रावि शन् = प्रवेश किया।

भावार्थः– जैसे संसार में मछली मारने वाला जल में मच्छियों को मारने योग्य देखता है, वैसे ही मृत्यु में ऋक्, यजु तथा सामदेव से विधान किये हुए कर्म में, इन कर्म परायण देवताओं को वध के योग्य देखा, उस समय देवताओं ने मृत्यु के अभिप्राय को जानकर उस ऋक्, साम और यजु के कर्म को छोड़कर स्वर नामक अक्षर की उपासना की।

यदा वा ऋचमाप्नोत्योमित्येवातिस्वर–
त्येवँ सामैवं यजुरेष उ स्वरो यदेत दक्ष–
रमेतदमृतमभयं तत्प्रविश्य देवा अमृता
अभया अभवन्।।४।।

सान्वय शदार्थः– यदा, वा = जब, ऋचम् = ऋक् को, आप्नोसि = प्राप्त करता है ओमइति एव= ओं ऐसा ही, अभिस्वरति = उच्चारण करता है, एवम् = ऐसे ही साम = साम को, एवम् = ऐसे ही, यजुः = यजु को, एष, उ = वह ही, स्वरः = स्वर यत् = क्योंकि, एतत् = यह, अक्षरम् = अक्षर है एतत् = यह अमृतम् = अमृत है,

अभयम् = अभय है, तत् = उसको, प्रविश्य = प्रविष्ट होकर, देवा: = देवता, अमृता: = अमर, अभया: = नीडर, अभवन् = हुए।

भावार्थ:- जब ऋक् का आश्रय करता है सब ॐकार का उच्चारण करता है, ऐसे ही साम का और यजु का आश्रय करके भी ॐकार का उच्चारण करता है, क्योंकि यह ओंकार रूप स्वर नामक अक्षर ही अमृत है अभय है इसलिये ही देवता इस ॐकार अक्षर की उपासना करके अमर तथा नीडर हुए।

स य एतदेवं विद्वानक्षरं प्रणौत्येतदे-
वाक्षरँ स्वरममृतमभयं प्रविशति तत्प्र-
विश्य यदमृता देवास्तदमृतो भवति।।५।।

सान्वय शदार्थ:- एतत् = इस, अक्षरम् = अक्षर को, एवम् = ऐसा, विद्वान् = जानने वाला, य: = जो, प्रणोति = प्रणाम करता है, स: = वह, एतत् एव = इसही, अक्षरम् = अक्षर स्वरम् = स्वर रूप, अमृतम् = अमृत को, अभयम् = अभय को, विशति = प्रवेश करता है, तत् = उसको, प्रविष्य प्रवेशकर, यत् = जो, देवा: = देवता, अमृता: = अमर हुए, त = उससे, अमृत: = अमर, भवति = होता है।

भावार्थ:- इस ओंकार नामक अक्षर को इस तरह अमृत और अभय गुणशाली जानकर प्रणाम करता है तथा इस अक्षर को ही अमृत अभय जानकर आश्रय करता है वह, जैसे इसके आश्रय से देव अमृत तथा अभय हुए थे वैसे ही अमृत और अभय होता है।

।।प्रथम अध्याय का चतुर्थ खण्ड संपूर्ण।।

अथप्रथमाध्यायस्य

पंचम खण्ड:

अथ खलु य उद्गीथः स प्रणवो यः प्रणवः स उद्गीथ इत्यसौ वा आदित्य उद्गीथ एष प्रणव ओमिति ह्येष स्वरन्नेति ।।१।।

<u>सान्वय शदार्थ:–</u> अथ = और खलु = निश्चय यः = जो, उद्गीथः = उद्गीथ है, सः = वह, प्रणवः = प्रणव है, यः = जो, प्रणवः = प्रणव है, सः = वह, उद्गीथः = उद्गीथ है, एषः = यह, आदित्यः इति = आदित्य, उद्गीथः = उद्गीथ है, एषः = यह ओम इति = ओम–ऐसा, स्वरन् = उच्चारण करता हुआ, एति = जाता है।

<u>भावार्थ:–</u> जो उद्गीथ है वह ही प्रणव है तथा जो प्रणव है वही उद्गीथ है, यह आदित्य ही उद्गीथ है एवं प्रणव है, कारण कि ओम् इस अक्षर का उच्चारण करते करते ही गमन करता है।

एतमु एवाहमभ्यगासिषं तस्मान्मम त्वमेकोऽसीति ह कोषीतकिः पुत्रमुवाच रश्मीँ स्त्वं पर्यावर्तयाद्दहवो वै ते भवि–ष्यन्तीत्यधि दैवतम्।।२।।

<u>सान्वय शदार्थ:–</u> कौषीतकिः = कुषीतक पुत्र, पुत्रम् = पुत्र को, उवाच = बोला, अहम् = मैं, = एतम्, उ, एव = इसका

ही, अभ्यगासिषम् = अभिमुखगान करता हुआ, तस्मात् = उससे, मम = मेरे, त्वम् = तू एकः = एक, असि = है, इति, ह = इस प्रकार, त्वम् = तू, रश्मीन् = किरणों को, पर्यावर्त्तयात् = उपासना कर, वै = निश्चय = ते = तेरे, बहवः = बहुतसे, भविष्यन्ति = होंगे, इति = इस प्रकार, अधिदैवतम् = अधिदैवत हुआ।

भावार्थः– कुषीतक के पुत्र कोषीतकी ने अपने पुत्र से कहा था कि मैंने इस आदित्य की इसी बुद्धि से उपासना की थी तब तुम मेरे एक मात्र पुत्र हुए थे, तुम बहुत पुत्र प्राप्त करने के लिये इस आदित्य की संपूर्ण किरणों की उपासना करो, अर्थात् आदित्य तथा ओंकार को बहुत्वयुक्त समझकर उपासना करो तब तुम्हारे अनेक पुत्र होंगे , यह अधिदैवत न कहा ह।

अथाध्यात्मं य एवायं मुख्यः प्राणस्त
मुद्गीथमुपासीतोमिति ह्येष स्वरन्नेति।।३।।

सान्वय शदार्थः– अथ = अब, अध्यात्मं = अध्यात्म कहा जाता है, यः जो, अयम् = यह, मुख्यः = मुख्य, प्राणः = प्राण है, तम् एव = उसको ही, उद्गीथम् = उद्गीथ दृष्टि से, उपासीत् = उपासना करे, एषः = यह, ही = क्योंकि, ओमिति ओम = इस तरह, स्वरन् = उच्चारण करता हुआ, एति = जाता है।

भावार्थः– अब अध्यात्मक कहते है, कि यह जो मुख्य प्राण है इसकी दृष्टि से उद्गीथ की उपासना करे, कारण कि मुख्य

प्राण ओंकार की उच्चारण करते करते ही गमन करता है।

एतमु एवाहमभ्यगासिषं तस्मान्मम त्वमेकोऽसीति ह कौषीतकिः पुत्रमुवाच प्राणां स्त्वं भूमानमभि गायताद्दहवो मे भविष्यन्तीति ।।४।।

<u>सान्वय शदार्थ:-</u> कौषीतकिः = कोषीतकि, पुत्रम् = पुत्र को, उवाच = बोला, एतम् उएव = उसको ही, अहम् = मैं, = अभ्यगासिषम् = गान करता हुआ, तस्मात् = उससे, मम = मेरे, त्वम् = तू, एकः = एक, असि = है इति, ह = इस प्रकार, त्वम् = तू, भूमानम् = भूमा प्राणान् = प्राणों को, अभिगायताम् = गानकर, वै = निश्चय ते = तेरे, = बहवः = बहुत से, भविष्यन्ति = होंगे, इति = इस प्रकार।

<u>भावार्थ:-</u> कौषीतकि ने अपने पुत्र से कहा, कि मैंने इसकी ही उपासाना की थी, उस उपासना से ही तुझ एकमात्र पुत्र को प्राप्त किया है, तू बहुत पुत्रों की कामना करके भूमा नामक प्राणों की बहुत बुद्धि से इसकी उपासना कर।

अथ खलु य उद्गीथः स प्रणवो यः प्रणवः स उद्गीथ इति होतृषदनाद्धै- वापि दुरुद्गीतमनुसमाहरतीत्यनुसमाह- रतीति ।।५।।

सान्वय शदार्थ:– अथ = और, खलु = निश्चय, यः = जो, उद्गीथः = उद्गीथ है, सः = वह, प्रणवः = प्रणव है, यः जो, प्रणवः = प्रणव है, सः = वह, उद्गीथः = उद्गीथ है, इति = इसलिये, होतृषदनात् = होता के स्थान से, एव = ही, अपिह =निश्चय, दुरू द्गगीथम् = दुष्ट उद्गीथ को, अनुसमा हरति = अनु संधान करता है।

भावार्थ:– जो उद्गीथ है वह ही प्रणव है तथा जो प्रणव है वह ही उद्गीथ है, प्रणव और उद्गीथ के अभेद दर्शी ने होत स्थान से दुष्ट उद्गीथ का अनुसंधान किया अर्थात् अच्छी तरह से प्रणवोच्चारण के द्वारा प्रमादवश स्वरादिहीन उद्गान कर्म को किया, इन दोनों में भेद देखनेवाला ऐसा नहीं कर सकता।

।। प्रथमाध्याय का पंचम खंड संपूर्ण ।।

अथप्रथमाध्यायस्य

षष्ठ खण्ड:

इयमेवर्गाग्निः साम तदेतदस्या मृच्यध्यू–
ढँ साम तस्मादृच्यध्यूढँ साम गीयत
इयमेव साग्निरमस्तत्साम ।।१।।

सान्वय शदार्थ:– इयम् एव = यह ही, ऋक् = ऋक् है, अग्निः = अग्नि, साम = साम है तत् = सो, एतत् = यह, ऋचि साम

= ऋक् में साम को समान, एत स्याम् = इसमें , अघ्यूढम् = स्थित है, तस्मात् = उससे, ऋचि = ऋक् में, अघ्यूढम् = स्थित, साम = साम, गीयते = गाया जाता है, इयमेव = यह ही, सा = सा है, अग्नि: = अग्नि, अम: = अम है, तत् = सो, साम = साम है।

भावार्थ :– यह पृथिवी ऋक् है, अग्नि साम है, यह अग्नि पृथिवी में, ऋचामें साम के समान स्थित है इसलिये ही पृथिवी नामक ऋक् में स्थित अग्नि नामक साम का गान किया जाता है, यह पृथिवी सा है, तथा अग्नि अम है, इस कारण पृथिवी तथा अग्नि दोनों मिलकर साम है।

अन्तरिक्षमेवर्ग्वायु: साम तदेतदेतस्या–
मृच्यध्यूढँ सामतस्मादृच्यध्यूढँ साम
गीयतेऽन्तरिक्षमेव सा वायुरमस्तत्साम ।।२।।

सान्वय शदार्थ :– अन्तरिक्षम् = अन्तरिक्ष, एव = ही = ऋक् = ऋक् हे, वायु: = वायु साम = साम है, तत् = सा, एतत् = यह, साम = साम, एतस्याम् = इस, ऋचि = ऋचामें, अध्यूढम् = स्थित, साम = साम, गीयते = गाया जाता है, अन्तरिक्षम् एव = अन्तरिक्ष ही, सा = सा है, वायु: = वायु, अम: = अम है, तत् = सो, साम = साम है।

भावार्थ :– यह अन्तरिक्ष ऋक् है, वायु साम है, यह वायु अन्तरिक्ष में ऋक् में सामके समान स्थित है, इसलिये ही अन्तरिक्ष नामक ऋक् में स्थित वायु नामक साम का गान किया जाता है, यह अन्तरिक्षसा है, तथा वायु अम है, इस कारण अन्तरिक्ष और

वायु दोनों मिलकर साम हैं।

द्यौरेवर्गादित्यः साम तदेतदेतस्यामृच्य-
ध्यूढँ साम तस्मादृच्यध्यूढँ साम गीयते
द्यौरेव साऽऽदित्योऽमस्तत्साम ।।३।।

सान्वय शदार्थः– द्यौः एव = स्वर्ग ही, ऋक् = ऋक् है, आदित्यः = आदित्य, साम = साम है, तत् = सो, एतत् = यह, एतस्याम् = इस, ऋचि = ऋक् में, साम = साम अध्यूढम् = स्थित है, तस्मात् = उससे, ऋचि = ऋक् में, अध्यूढम = स्थित, साम = साम, गीयते = गाया जाता है, द्यौः एव = स्वर्ग ही, सा = सा है, आदित्यः = आदित्य, अमः = अम है, तत् = सौ, साम = साम है।

भावार्थः– स्वर्ग ऋक् है, आदित्य साम है, यह आदित्य स्वर्ग में साम के समान स्थित है, इस कारण ही स्वर्ग नामक ऋक् में स्थित आदित्य नामक साम गाया जाता है। स्वर्गसा है, आदित्य अम है, इसलिये स्वर्ग तथा आदित्य दोनों को मिलाकर साम है।

नक्षत्राण्येवर्क्चन्द्रमाः साम तदेतदेत
स्यामृच्यध्यूढ़ँ साम तस्मादृच्यध्यूढँ
साम गीयते नक्षत्राण्येव सा चन्द्रमा
अमस्तत्साम।।४।।

सान्वय शदार्थः– नक्षत्राणि एव = तारागण ही, ऋक् = ऋक् है चन्द्रमाः = चन्द्रमा, साम = साम है, तत् = सो, एतत् =

यह, एतस्याम् = इस, ऋचि = ऋक् मे, साम = साम, अध्यूढम् = स्थित है, तस्मात् = उससे, ऋचि = ऋक् मे, अध्यूढम् = स्थित, साम = साम, गीयते = गाया जाता है, नक्षत्राणि एवं = नक्षत्रही, सा = सा है, चन्द्रमा: = चन्द्रमा, अम: = अम है, तत् = सो, साम = साम है,

भावार्थ:– सभी नक्षत्र ही ऋक् है, चन्द्रमा साम है, यह चन्द्रमा नक्षत्र समूह में ऋक् में साम के समान स्थित रहता है, इसलिए नक्षक नामक = ऋक में स्थित चन्द्रमा नायक साम का गान किया जाता है यह नक्षत्र समूह ही सा है चन्द्रमा अम है, अम एवं सभी नक्षत्र तथा चन्द्रमा दोनों को मिलाकर साम है।

अथ यदेतदादित्यस्य शुक्लं भा:सैवर्गथ
यन्नीलं पर: कृष्णं तत्साम तदेतदेतस्या–
मृच्यध्यूढँ साम तस्मादृच्यध्यूढँ साम
गीयते।।5।।

सान्वय शदार्थ:– अथ = और, यत् = जो, एतत् = वह, आदित्यस्य = आदित्य की, शुक्लम् = श्वेत, भा: = दीप्ति है, सा एव = वह ही, ऋक् = ऋक् है, अथ = और, यत् = जो, नीलम् = नील, पर: = अत्यन्त, कृष्णम् = कृष्ण है, तत् = वह साम = साम है, तत् = सो, एतत् = यह, एतस्याम् = इस, ऋचि = ऋक् में , साम = साम अध्यूढम् = स्थित है, तस्मात् = उससे, ऋचि = ऋक मे, अध्यूढम = स्थित, साम = साम,

गीयते = गाया जाता है।

भावार्थ :– यह जो आदित्य की शुक्ल दीप्ति है यह ही ऋक् है, तथा जो नील अथवा अत्यन्त कृष्णवर्ण आभा है, वह ही साम है, इस शुक्ल वर्ण आभारूप ऋक् में कृष्ण वर्ण आभारूप साम स्थित रहता है, इसलिये ही ऋक् में स्थित साम का गान किया जाता है।

अथ यदेवैतदादित्यस्य शुक्लं भाः सैव
साऽथ यन्नीलं परः कृष्णं तदमस्तत्सा
माऽथ य एषोन्तरादित्ये हिरण्मयः पुरूषो
दृश्यते हिरण्यश्मश्रुर्हिरण्यकेश आप्रण–
खात्सर्व एव सुवर्णः ।।६।।

सान्वय शदार्थ :– अथ = और, यत् एव = जो, एतत् = वह, अदित्यस्य = आदित्य की, शुक्लम् = शुक्ल, भाः = दीप्ति है, सा एव = वह ही, सा = सा है, अथ = और, यत् = जो, नीलम् = नील, परः = अत्यन्त, कृष्णम् = कष्ण है, तत् = वह, अमः = अम है, तत् = सो, साम = साम है, अथ = और, एष = यह, अन्तरादित्ये = आदित्य के भीतर हिरण्मयः = हिरणमय, पुरूषः = पुरूष, दृश्यते = दीरवता है, हिरण्यश्मश्रुः = हिरण्मय श्मश्रुवाला, हिरण्यकेशः = हिरण्य मय केशवाला, आप्रणखात् = नरव पर्यन्त, सर्वः एव = सब ही, सुवर्ण = सुवर्ण है।

भावार्थ :– आदित्य की जो यह शुक्ल दीप्ति है यही सा है, और जो इसकी अभिनील आभा है वह ही अम है, दोनों मिलकर ही

साम है, इस आदित्य मण्डल के भीतर जो हिरणमय है, अधिक क्या कहें उसके नरव के आगे के केशपर्यन्त सब ही सुवर्ण है।

तस्य यथा कप्यासं पुण्डरीकमेवमक्षिणी तस्योदिति नाम स एष सर्वेभ्य: पाप्मभ्य उदित उदेति ह वै सर्वेभ्य: पाप्मभ्यो य एवं वेद ।।७।।

सान्वय शदार्थ :– तस्य = उसके, अक्षिणी = नेत्र कप्यासं यथा = वानर की पीठ के अधोभाग के समान, पुण्डरीकम् = अत्यन्त तेजस्वी लाल है, एवम् = ऐसे ही, तस्य = उसका उत्, इति = उत् यह, नाम = नाम है, स: वह, एष: = यह, सर्वेभ्य: = सभी पाप्मभ्य: = पापों से, उदित: = उठा हुआ, उदेति = उदित होता है, य: जो, पापों से, उदेति = उठता है।

भावार्थ :– उसके पुण्डरीक (कमल) के सदृश तेजस्वी दोनों नेत्र वानर की पीठ के अधोभाग के समान लाल लाल है, उनका 'उत्' यह नाम है, क्योंकि वह सभी पापों से उठे हुए पृथक् है, जो इस प्रकार जानता है वह भी सभी पापों से दूर रहता है।

तस्यर्क्च साम च गेष्णौ तस्मादुद्गीथ स्तस्मात्त्वेवोद्गातैतस्य हि गाता स एष ये चामुष्मात्परांञ्चो लोकास्तेषां चेष्टे देव–कामानां चेत्यधिदैवतम् ।।८।।

सान्वय शदार्थः– तस्य = उसके, ऋक् = ऋक्, च = और, साम च = साम भी, गेष्णौ अंगुलियो के पोरूए अथवा गायक है, तस्मात् = उससे, उद्गीथः = उद्गीथ है, तस्माद् एव तु = उस कारण ही, एतस्य = इसका, गाता = गाने वाला, उद्गाता= उद्गाता है, सः = वह, एषः = यह, ये, च = जो, अमुष्मात् = इससे, परांच = ऊपर के, लोकाः लोक है, तेषाम् = उनका, च = और, देवकामानांच = देवताओं के मनोरथों का भी, ईष्टे = ईश्वर होता है

भावार्थः– ऋक् तथा साम उसकी अंगुलियों के दो पोरू ए वा गायक है, इस कारण ही इनकों, उद्गीथ कहते है तथा इस कारण ही जो इनका गान करते है उनको उद्गाता कहते है यही उत् नामक देवता इस आदित्य के ऊपर के जो लोक है उन पर प्रभुता करते है तथा वहीं देवताओं की सभी इच्छाओं को पूरा करते है, यह अधिदेवत कहा है।

।।प्रथमाध्याय का षष्ठ खण्ड संपूर्ण।

अथप्रथमाध्यायस्य

सप्तम खण्डः

अथाध्यात्मं वागेवक्प्राणः साम तदेत–
देतस्यामृच्यध्यूढँ साम तस्मादृच्यध्यु–

ढँ सामगीयते। वागेव सा प्राणो-

ऽमस्तत्साम।।१।।

<u>**सान्वय शदार्थ:-**</u> अथ = अब, अध्यात्मम् = अध्यात्म कहते है, वाक् - एव = वाणी ही ऋक् = ऋक् है, प्राण: = प्राण, साम = साम है, तत् = सो, एतत् = यह, एतस्याम् = इसमें ऋचि = ऋक् में, साम = साम, अध्यूढम् = स्थित है, तस्मात् = उससे, ऋचि = ऋक् में, अध्यूढम् = स्थित, साम = साम, गीयते = गाया जाता है, वाक् एव = वाणी ही, सा = सा है, प्राण: = प्राण, अम: = अम है, तत् = सो, साम है।

<u>**भावार्थ:-**</u> अब अध्यात्म बताते है कि, वाणी ही ऋक् है, प्राण ही साम है, प्राण नामक साम वाणी नामक ऋक् में स्थित है, इस कारण ऋक् में साम का गान किया जाता है, वाक् सा है, प्राण अम है तथा वाणी प्राण उभय मिलकर ही साम है।

चक्षुरेवर्गात्मा साम तदेतदेतस्यामृच्य-

ध्यूढँ साम तस्मादृच्यध्यूढँ साम

गीयते । चक्षुरेव साऽऽत्माऽमस्त-

त्साम।।२।।

<u>**सान्वय शदार्थ:-**</u> चक्षु: एव = चक्षुही, ऋक् = ऋक् है, आत्मा = आत्मा, साम = साम है, तत् = सो, एतत् = यह, एतस्याम् = इसमें, ऋचि = ऋक् मे अध्यूढम् स्थित है तस्मात् = उससे ऋचि = ऋक में अध्यूढम् = स्थित, साम = साम, गीयते = गान किया जाता है, चक्षु: एव = चक्षु ही,

सा = सा है, आत्मा = आत्मा, अमः = अम है, तत् = सो, साम = साम है।

भावार्थ:– चक्षु ही ऋक् है, छायात्मा साम है, छायात्मा साम चक्षुः स्वरूप ऋक् में स्थित है, इसलिये ऋक् में स्थित साम का गान किया जाता है, चक्षु ही सा है, छायात्मा अम है, इस कारण चक्षु तथा छायात्मा दोनों मिलकर ही साम है।

क्षोत्रमेवर्ङ् मनः साम तदेतदेतस्यामृ–
च्यध्यूढँ साम तस्मादृच्यध्यूढँ साम
गीयते। श्रोत्रमेव सा मनोऽमस्तत्साम ।।३।।

सान्वय शदार्थ:– श्रोत्रम् एव = श्रोत्रही, ऋक् = ऋक् है, मनः = मन, साम = साम है, तत् = सो, एतत् = यह, एतस्याम् = इस, ऋचि = ऋक् में, अध्यूढम् = स्थित, साम = साम, गीयते = गान किया जाता है, श्रोत्रम् एव = श्रोत्रही, सा = साहै, मनः = मन, अमः = अम है, तत् = सो, साम = साम है।

भावार्थ:– श्रोत्रही ऋक् है मन साम है, मनोरूप साम श्रोत्र रूप ऋक् में स्थित है, अत एव ऋक् में स्थित साम का गान करते है, वही सा है, मन अम है इस कारण श्रोत्र तथा मन दोनों मिलकर साम है।

अथ यदेतदक्ष्णः शुक्लं भाः सैवर्गथ
यन्नीलं परः कृष्णं तत्साम तदेतदेत–
स्यामृच्यध्यूढँ साम तस्मादृच्य ध्यूढँ
साम गीयते। अथ यदेवैतदक्ष्णः शुक्लं

भाः सैव साऽथ यन्नीलं परः कृष्णं तदमस्तत्साम॥४॥

सान्वय शदार्थ :– अथ = और, यत् = जो, एतत् = यह, अक्षणः = नेत्र का, शुक्लम् = श्वेत, भाः = दीप्ति है, सा–एव = वह ही, ऋक् = ऋक् है, अथ = और यत् = जो, नीलम् = नील, परः = अत्यन्त, कृष्णम् = कृष्ण है, तत् = वह साम = साम है, तत् = सो, एतत् = यह, एतस्याम् = इसमें, ऋचि = ऋक् में साम = साम है, अध्यूढम् = स्थित है, तस्मात् = उससे, ऋचि = ऋक् में अध्यूढम् = स्थित, साम = साम, गीयते = गान किया जाता है, अथ = और, यम् एव = जो एतत् = यह, अक्षणः = नेत्रकी, शुक्लम् = शुक्ल, भाः दीप्ति है, सा, एव = वह ही, सा = सा है, अथ = और, यम् = जो नीलम् = नील, परः = अत्यन्त कृष्णम् कृष्ण है, तत् = सो, आमः = अम है तत् = वह, साम = साम है।

भावार्थ :– यह जो नेत्रकी शुक्ल दीप्ति है वह तो ऋक् है, तथा जो नील अर्थात् अतिकृष्ण वर्ण आभा है वही साम है, इस शुक्ल वर्ण आभारूप ऋक् में स्थित साम का ज्ञान किया जाता है, चक्षु की यह शुक्ल आभा ही सा है तथा इसकी अति कृष्ण आभा अम है, और दोनों मिलकर साम है।

अथ य एषोऽन्तरक्षिणि पुरुषो दृश्यते सैवर्क्तत्साम तदुक्थं तद्यजुस्तब्रह्म तस्यै–तस्य तदेव रूपं यदमुष्य रूपं यावमुष्य गेष्णौ तौ गेष्णौ तौ यन्नाम तन्नाम॥५॥

सान्वय शदार्थः– अथ = और, यः = जो, एषः = यह, अन्तरक्षिणि = नेत्र के अन्दर पुरुषः = पुरुष, दृश्यते = दिखायी पड़ता है, सा एव = वह ही, ऋक् = ऋक् है तत् = वह, यजुः = यजु है, तत् = वह, ब्रह्म = ब्रह्म है, यत् = जो, अमुष्य = इसका, रूपम् = रूप है, तत–एव = वह ही, तस्य = उस, एतस्य = इसका रूपम् = रूप है अमुष्य इसके, यौ = जो, गेष्णौ–गायक है, तौ = वह, गेष्णौ = गायक है, यत् = जो नाम = नाम है, तत् = बह्म नाम = ब्रह्म नाम है।

भावार्थः– इस नेत्र के भीतर जो पुरूष दिखायी पडता है वह ही ऋक् है, वह ही साम है वह ही उक्थ है, वह ही यजु है, वह ही ब्रह्म है, उस आदित्य में स्थित पुरूष का रूप है इस नेत्र में स्थित पुरूष का भी वही रूप है, उसके जो दो गायक है इसके भी वही दो गायक है जो उसका नाम है इसका भी वही नाम है।

स एष ये चैतस्मादर्वाञ्चो लोकास्तेषां
चेष्टे मनुष्यकामानां चेतितद्य इमे
वीणायां गायन्त्येतं ते गायन्ति तस्मात्ते
धनसनयः ॥६॥

सान्वय शदार्थः– सः = वह, एषः = यह, ये, चः जो, अस्मान् = इससे, अर्वान् च = नीचे के, लोकाः लोक है, तेषाम् = उनका, च = और, मनुष्य कामानां च = मनुष्य की अभिलाषाओं का भी, ईस्टे = ईश्वर है, ये = जो, वीणायाम् = वीणा में, गायन्ति = गान करते है, ते = वह, तत् = उस, एतत् = इसको, गायन्ति = गाते है, तस्मात् = उससे, ते, ते, धनसनयः

= धनवान् होते हैं।

<u>भावार्थ:-</u> यह चाक्षुष पुरूष ही इस लोक से नीचे के सभी लोको का तथा मनुष्यों की समस्त कामनाओं का प्रभु है, इस कारण जो वीणा के साथ गान करते है वह इसका ही गान करते है तथा धनवान् होते हैं।

अथ य एतदेवं विद्वान्साम गायत्युभौ
स गायति सोऽमुनैव स एष ये चामु-
ष्मात्परांञ्चो लोकास्ताँ श्चाप्नोति देव-
कामांश्च ।।७।।

<u>शब्दार्थ:-</u> अथ = और, एतत् = इसको, एवम् = ऐसा, विद्वान = जानने वाला यः जो, साम = साम को, गायति = गान करता है, सः = वह, उभौ = दोनों को, गायति – गाता है, सः = वह, अमुना– एव = इसके द्वारा ही, सः = वह, एष = यह ये, च = जो, अस्मात् = इससे, परांचः = ऊपर के, लोकः = लोक है, तान् = उन को, च = और, देवकामानाम् च = देवताओं के भोग्य विषयों को, आप्नोति = प्राप्त होता है।

<u>भावार्थ :-</u> जो ऐसा जानकर इन साम का गान करता है वह चाक्षुष औश्र आदित्य में स्थित दोनों पुरूषों का गान करता है। वह इसे आदित्य के द्वारा उससे ऊपर के सकल लोक और देवताओं के भागने योग्य सकल विषयों को पाता है।

अथानेनैव ये चैतस्मादर्वाञ्चो लोका-
स्ताँ श्चाप्नोति मनुष्यकामां तस्माद् हैवं

विदुद्गाता ब्रूयात्॥८॥

सान्वय शदार्थ:– अथ = और, अनेन, एव = इसके, द्वारा ही, ये, च = जो, एतस्मात् = इससे, अर्वांच = नीचे के, लोका: = लोक है, तत् = उनको, च = और, मनुष्य = कामांश्च = मनुष्यों की अभिलाषाओं को भी, आप्नोति, प्राप्त होने वाला उद्गाता = उद्गाता, ब्रूयात् = कहे।

भावार्थ:– और वह इस चाक्षुस पुरूष से इस लोक से नीचे के सभी लोक तथा मनुष्य के भोगने योग्य सभी विषयों को प्राप्त करता है, इस कारण इस सबका तत्व जानने वाला उद्गाता यजमान को कहे।

क ते काममागायानीत्येष ह्येव कामा–
गानस्येष्टे य एवं विद्वान्साम गायति
साम गायति॥९॥

सान्वय शदार्थ:– ते = तेरे, कम् = किस, कामम् = अभीष्ट को, आगा यानि = गाकर प्रार्थना करूं, इति = ऐसा, एष :, एव, हि = यह उद् गाता ही, कामा गानस्य = अभिलषित गाने का, ईस्टे = प्रभु होता है, य: = जो, एवम् = ऐसा, विद्वान् = जानने वाला, साम = साम को गायति = गाता है।

भावार्थ:– तुम्हारे किस अभिलषित विषय की सामगान से प्रार्थना करूं! ऐसा उद्गाता उस गान के द्वारा इच्छित पदार्थ प्राप्त कर सकता है, ऐसा जानकार उद्गाता साम का गान करते है, (तृतीय खण्ड के इस सप्तम खण्ड तक का यह आशय है कि,

सामगान में पृथिवी आदि लोक दृष्टि तथा चक्षु रादि दृष्टि करे, विश्वभर में व्याप्त प्राण शक्ति से सूर्य चन्द्रादि एवं चक्षु कंर्ण आदि प्रकट हुए हैं, सामदि गान में भी उस प्राण शक्ति को ही प्रकट किया है इसलिये सामगान रूप स्तौत्र में प्राण शक्ति क्रिया ही व्यक्त होती है।)

।। प्रथमाध्याय का सप्तम खण्ड संपूर्ण।

अथप्रथमाध्यायस्य

अष्टम खण्ड:

त्रयो होद्गीथे कुशला बभूबु: शिलक: शालावत्यश्चैकितायनो दाल्भ्य: प्रवा–हणो जैवलिरिति, ते होचुरूद्गीथे वै कुशला: स्मो हन्तोद्गीथे कथां वदाम इति।।१।।

<u>सान्वय शदार्थ:–</u> शालावत्य: = शलावत का पुत्र, शिलक: = शिलक, दाल्भ्य: = दल्भ गौत्री, चैकितायन: = चैकितायन, जैवलि: = जीवल का पुत्र प्रवाहण: = प्रवाहण, इति = इस प्रकार, भय: = तीन, उद्गीथे = उद्गीथ में, कुशला: = प्रवीण, बभूवु: ह = हुए, ते, ह = वह, उचु: = बोले, वै = निश्चय, उद्गीथे

= उद्गीथ मे, कुशलाः , स्मः = प्रवीण है, हन्त = पूछते है कि, उद्गीथे = उद्गीथ के विषय में, कथाम् = चर्चा को, वदामः = कहते हैं, इति = इस प्रकार।

भावार्थः– शलावत की पुत्र शिलक, दल्भ गौत्री चैकितायन तथा जीवलक पुत्र प्रवाहण ये तीनों उद्गीथ के विषय में प्रवीण हुए, एक समय उन्होंने परस्पर विचार करते हुए कहा कि हम उद्गीथ के विषय में प्रवीण हो गये है अतः आपकी संमति हो तो इस विषय की आलोचना करें।

तथेति ह समुपविविशुः स ह प्रवाहणो
जैवलिरुवाच भगवन्तावग्रे वदतां ब्राह्म–
णयोर्वदतोर्वाचँ श्रोष्यामीति ।।२।।

सान्वय शदार्थः– तथा, इति, ह = ऐसा ही हो, इस प्रकार कहकर, समुप विविशुः = बैठ गये, सः = वह, जैवलिः = जीवल का पुत्र, प्रवाहणः = प्रवाहण, उवाच, ह = बोला, भगवन्तौ = आप दोनो, अग्रे = आगे, वदताम् = कहें, ब्राह्मणयोः = ब्रह्मज्ञानियों के, वदतोः = कहते हुए, श्रोष्यामि = सुनूंगा, इति = इस प्रकार।

भावार्थः– ऐसा ही हो इस तरह कहकर वे सभी बैठ गये, तब जीवल कुमार प्रवहण ने कहा कि आप दोनों पहले कहें मैं आप दोनों, ब्रह्मज्ञानियों के आलाप का श्रवण करूंगा।

स ह शिलकः शालावत्यश्चैकितायनं
दाल्भ्यमुवाच हन्त त्वा पृच्छानीति

पृच्छेति हो वाच ॥३॥

<u>**सान्वय शदार्थ :–**</u> सः = वह, शालावत्यः = शलावत का पुत्र, शिलकः = शिलकः, दाल्भ्यम् = दल्भ गोत्री, चेकितायनम् = चैकितायन को, उवाच = बोला, हन्त = क्या, त्वा = तुमको, पृच्छानि = पूछं, पृच्छ = पूछ, इति = ऐसा, उवाच = बोला।

<u>**भावार्थ :–**</u> फिर शलावत के पुत्र शिलक ने दल्भ गोत्री चैकितायन से कहा, कि यदि आपकी आज्ञा हो तो मै प्रश्न करूं? चैकितायन के ऐसा कहने पर शिलक से कहा कि प्रश्न करो।

का साम्नो गतिरिति स्वर इति होवाच
स्वरस्य का गति रिति प्राण इति होवाच
प्राणस्य कागतिरित्यन्न मिति होवाचा–
ऽन्नस्य का गतिरित्याप इति होवाच॥४॥

<u>**सान्वय शदार्थ :–**</u> साम्नः = साम की, का = क्या, गतिः = गति है, इति = इस प्रकार कहने पर, स्वरः = स्वर है, इति = इस प्रकार, उवाचह = बोला, स्वरस्य = स्वर की, का = क्या, गतिः = गति है, इति = ऐसा कहने पर, प्राणाः = प्राण, इति = ऐसा, उवाच ह = बोला, प्राणस्य = प्राण की, का = क्या, गतिः = गति है, इति = ऐसा कहने पर अन्नम् = अन्न, इति = ऐसा, उवाच, ह = बोला, अन्नस्य = अन्न की का गतिः = क्या गति है, इति = ऐसा कहने पर , आपः = जल, इति = ऐसा उवाचह = बोला।

<u>**भावार्थः–**</u> प्रश्न यह है कि साम की गति क्या है? उत्तर–स्वर

साम की गति है। प्रश्न– रवर की गति क्या है? उत्तर–स्वर की गति प्राण है, प्रश्न–प्राण की गति क्या है? उत्तर– अन्न प्राण की गति है। प्रश्न– अन्न की गति क्या है? उत्तर–अन्न की गति जल है।

अपां का गतिरित्यसौ लोक इति होवाचामुष्य लोकस्य का गतिरिति, न स्वर्गं लोकमतिनयेदिति होवाच, स्वंगं वयं लोकँ समाभिसंस्थापयामः स्वर्ग– सँ स्तावँ हि सामेति ।।५।।

<u>सान्वय शदार्थः–</u> अपाम् = जल की, का, गति : = क्या गति है, इति = ऐसा कहने पर असौ = यह, लोकः = लोक, इति = ऐसा, उवाच, ह= बोला, अमुष्य = उस लोकस्य = लोककी, का, गतिः = क्या गति है, इति = ऐसा कहने पर , स्वर्गम् = स्वर्ग, लोकम् = लोकको, न = नहीं, अतिनयेत् = अतिक्रमण करे, इति = ऐसा उवाच,ह = बोला, वयम् = हम, साम = साम को, स्वर्गम् = स्वर्ग, लोकम् = लोकका, अभि संस्थापयामः = निश्चय करते है, हि = क्योंकि, साम = साम स्वर्ग संस्तावम् = स्वर्गरूप से स्तुति किया जाता है, इति = इस प्रकार।

<u>भावार्थ:–</u> प्रश्न–जल की क्या गति है? उत्तर–यह लोक जल की गति है। प्रश्न–उस लोक की गति क्या है? उत्तर–साम स्वर्ग लोक को लांघकर नहीं ले जाता, इस कारण हम साम को

स्वर्गलोकप्रतिष्ठ मानते है अर्थात् साम मनुष्य को स्वर्ग लोक पर्यन्त ही ले जाता है ऐसा हम जानते है, क्योंकि साम की स्तुति स्वर्ग रूप से ही की जाती है।

तँ ह शिलकः शालावत्यश्चैकितायनं दाल्भ्यमुवाचाऽप्रतिष्ठितं वै किल ते दाल्भ्य साम यस्त्वेतर्हि ब्रूयान्मूर्धा ते विपतिष्यतीति मूर्धा ते विपतेदिति।।६।।

सान्वय शदार्थः— शालावत्यः = शलावत का पुत्र, शिलक := शिलक, तम् = उस, दाल्भ्यम् = दल्भ गोत्री, चैकितायनम् = चैकितायन को, उवाच, ह = बोला, दाल्भ्य = हे दाल्भ्य, वै किल = निश्चय, ते = तेरा, साम = साम, अप्रतिष्ठि तम् = अप्रतिष्ठित है, य= तु = जो, एतर्हि = इस समय, ते = तेरा, मूर्धा = मस्तक , विपतिष्यति = गिर जायगा, इति = ऐसा, ब्रूयाम् = कहे, ते = तेरा , मूर्धा = मस्तक, विपतेत् = गिर जाय, इति = इस प्रकार।

भावार्थः— शलावत पुत्र शिल्क ने दल्भ गोत्री चैकितायन से कहा कि हे दाल्भ्य! तेरा साम अप्रतिष्ठित है। इस समय यदि कोई तुमझे कहे कि तेरा मस्तक गिर जायगा तो तेरा मस्तक गिर जाय?

हन्ताहमेतद् भगवतो वेदानीति, विद्धीति होवाचामुष्य लोकस्य का गतिरित्ययं लोक इति होवाचाऽस्य लोकस्य का

गतिरिति न प्रतिष्ठां लोकमतिनयेदिति होवाच प्रतिष्ठां वयं लोकं सामाभि–संस्थापयामः प्रतिष्ठा सं स्तावं हि सामेमि ।।७।।

सान्वय शदार्थः– हन्त = क्या, अहम् = मैं, एतत् = वह, भगवतः = आपसे, वेदानि = जान सकता हूँ ? इति = ऐसा कहने पर, विद्धि = जान, इति = ऐसा, उवाच, ह = बोला, अमुष्य = उस, लोकस्य = लोककी, का– गतिः = क्या गति है, इति= ऐसा कहने पर, अयम् = यह, लोकः = लोक, इति = ऐसा, उवाच, ह = बोला, अस्य = इस, लोकस्य लोक की , का गतिः = क्या गति है, इति = ऐसा , कहने पर , प्रतिष्ठाम् = प्रतिष्ठा रूप, लोकम् = लोक को, न = नहीं, अतिनयेन् = अतिक्रमण करे, इति = ऐसा, उवाच बोला, वयम् = हम, साम = साम को, प्रतिष्ठाम् – प्रतिष्ठारूप लोकम् = लोक का, अभि संस्थापयामः = निश्चय करते हैं, हि = क्योंकि, साम = साम प्रतिष्ठा सस्तावम् = प्रतिष्ठारूप से स्तुति की जाती है, इति = इस कारण।

भावार्थः– उस समय दाल्भ्य ने कहा कि मै तुमसे साम की प्रतिष्ठा जानना चाहता हूँ शालावत्य ने कहा कि जान लो। दाल्भ्य ने प्रश्न किया कि परलोक की क्या गति है? शालावत्य ने कहा कि –यह लोक, तब समझा कि इस लोक की क्या गति है? उत्तर– मिला कि – प्रतिष्ठारूप लोक को लांघना ठीक नहीं है, हम साम को प्रतिष्ठा रूप लोक जानते है, क्योंकि साम की

प्रतिष्ठा रूप से ही स्तुति की जाती है।

तँ ह प्रवाहणो जैवलिरुवाचान्तवद्वै किल
तै शालावत्य साम यस्त्वेतर्हि ब्रूयान्मूर्धा ते
विपतिष्यति मूर्धा ते विपतेदिति। हन्ताहमे–
तद्भगवतो वेदानीति विद्धीति होवाच॥८॥

सान्वय शदार्थ :– जैवलिः = जीवल का पुत्र, प्रवाहणः = प्रवाहण, तम् = उसको, उवाच,ह = बोला, शालावत्य = हे शालावत्य, किलवै : निश्चय, ते = तेरा, साम = साम, अन्तवत् = अन्त वाला है, यः सु = जो, एतर्हि, = इस समय, ते = तेरा, मूर्धा = मस्तक, विपतिष्यति = गिर जायगा, इति = ऐसा, ब्रूयात् = कहे, ते = तेरा = मूर्धा = मस्तक, विपतेत् = गिरे, इति = इस प्रकार, अहम् = मैं, एतत् = यह, भगवतः – आपसे, वेदानि = जानूं, इति = ऐसा कहने पर, विद्धि = जान, इति = ऐसा, उवाच, ह = बोला।

भावार्थ :– इसके पश्चात् जीवल तनय प्रवाहण ने उनसे कहा, कि हे शालावस्य! तुम्हारा साम निश्चय अन्तवाला है, इसलिये इस समय यदि कोई कहे कि तुम्हारा मस्तक गिर जायगा तो तुम्हारा मस्तक गिर जाय, इस पर शालावस्य ने कहा कि तो मैं यह विषय क्या आपसे जान सकता हूँ? प्रवाहण ने कहा कि जान लो।

॥ प्रथमाध्याय का अष्टम खण्ड संपूर्ण।

अथप्रथमाध्यायस्य

नवम खण्ड:

अस्य लोकस्य का गतिरित्याकाश इति होवाच सर्वाणि ह वा इमानि भूतान्या–काशादेव समुत्पद्यन्त आकाशं प्रत्यस्तं यन्त्याकाशो ह्येवैभ्यो ज्यायानाकाश: परायणम्।।१।।

<u>**सान्वय शदार्थ :–**</u> अस्य = इस, लोकस्य = लोक की, का गति: क्या गति है, इति = ऐसा कहने पर, आकाश : = आकाश, इति = ऐसा, उवाच, ह = बोला, वै = निश्चय, इमानि =यह, सर्वाणि = सब, भूतानि = भूत, आकाशात् = एव = आकाश से ही, समुत्पद्यन्ते ह = उत्पन्न होते है, आकाशं प्रति = आकाश के प्रति, अस्तम्, यन्ति = लीन होते है, हि = निश्चय, आकाश: एव = आकाश ही, एभ्य: = इनसे, ज्यान्यान् = श्रेष्ठ है, आकाश: = आकाश, परायणम् = परम आश्रय है।

<u>**भावार्थ :–**</u> प्रश्न इस लोक की गति क्या है? उत्तर–आकाश, यह सकल भूत आकाश से ही उत्पन्न होते है तथा आकाश में ही लीन होते हैं। आकाश ही सभी भूतों से श्रेष्ठ है, एवं आकाश ही सभी भूतों का परम आश्रय है।

स एष परोवरीयानुद्गीथ: स एषोऽनन्त:

परोवरीयो हास्य भवति परोवरी यसो ह

लोकांजयति य एतदेवं विद्वान्परोवरीयाँ

समुद्गीथमुपास्ते।।२।।

सान्वय शदार्थ:– स: = वह, एष: = यह, परोवरीयान् = सबसे श्रेष्ठ, उद्गीथ: = उद्गीथ है, स: = वह, एष: = यह, अनन्त: = अनन्त है, एवम् = ऐसा, विद्वान् जानने वाला, य: = जो, परोवरीयांसम् = सब से श्रेष्ठ, उद्गीथम् = उद्गीथ को, उपास्ते = उपासना करता है, अस्य = इसका, परोवरी य: परम श्रेष्ठ जीवन भवति, ह = होता है। लोकान् = लोकों को जयति, ह = जीतता है।

भावार्थ:– आकाश ही सर्व श्रेष्ठ है, उद्गीथ है वह अनन्त है, जो ऐसा जानकर इस सर्वश्रेष्ठ उद्गीथ की उपासना करते हैं उनका जीवन श्रेष्ठ से श्रेष्ठ होता है, वह आकाश पर्यन्त सभी श्रेष्ठ लोको को जीत में हैं।

तँ हैतमतिधन्वा शौनक उदरशाण्डि–

ल्यायोक्त्वोवाच यावत्त एनं प्रजाया–

मुद्गीथं वेदिष्यन्ते परोवरीयो हैभ्यस्ता–

वदस्मिं ल्लोके जीवनं भविष्यति।।३।।

सान्वय शदार्थ:– तम् = उस, एतम् = इसको, शौनक: = शुनक पुत्र, अतिधन्वा = अतिधन्वा, उदर शाण्डिल्याय = उदर शण्डिल्य के अर्थ, उक्त्वा = कहकर, उवाच ह =

बोला, ते = तेरी, प्रजायाम् = प्रजा में, यावत् = जब तक, एनम् =इस, उद्गीथम् = उद्गीथ को, वेदिष्य न्ते = जानेंगे, तावत = तब तक अस्मिन् = इस लोके = लोक में, एभ्य: = इनसे, परोवरीय: = परमोत्कृष्ट, जीवनम् = जीवन, भविष्यति ह = होगा।

भावार्थ:– इस उद्गीथ के ज्ञान से संपन्न शुनक पुत्र अतिघन्वा ने उदर शांण्डिल्य से कहा था, कि तुम्हारे वंशधरों में जो जब तक उद्गीथ को जानेगें, तब तक उनका जीवन साधारण जीवन से परमोत्तम होगा।

तथाऽमुष्मिंल्लोके लोक इति स य एत देवं
विद्वानुपास्ते परोवरीय एष हास्यास्मि–
ल्लोके जीवनं भवति तथाऽमुष्मिंल्लोके
लोक इति लोके लोक इति।।४।।

सान्वय शदार्थ:– तथा = जैसे ही, अमुष्मिन् लोके = पर लोक = पर लोक मे, लोक: = श्रेष्ठ लोकवाला होगा, स: = वह, इति = इस प्रकार , एवम् = ऐसा, विद्वान् जानने वाला, य: जो एतत् = इसको, उपास्ति = उपासना करता है, हि = निश्चय अस्मिन् = इस, लोके = लोक में, अस्य = इसका, परोवरी य: = उत्तमोतम, जीवनम् = जीवन, तथा = वैसे ही, अमुष्मिन्, लोके = परलोक में, लोक: = श्रेष्ठ लोक, भवति = होता है, इति = इस प्रकार।

भावार्थ:– और परलोक में परमोत्तम स्थान प्राप्त होगा। इस

समय भी जो ऐसा जानकर इस उद्गीथ की उपासना करते हैं उनको इस लोक में उत्तमोत्तम जीवन तथा परलोक में परमोत्तम स्थान की प्राप्ति होती है। इस तरह आठवें और नवमें खंड के अन्य प्रकार से यह बात दिखाई है कि – सामादि वैदिक स्तोत्र स्वर से उच्चारण किये जाते है, स्वर प्राण शक्ति की ही क्रिया है, प्राण शक्ति अन्न के आश्रय से पुष्ट होती है, अन्न जलका ही विकार है, जल का आश्रय आकाश है वह आकाश ब्रह्म से उत्पन्न है इस प्रकार यज्ञ में ब्रह्म दर्शन का उपदेश किया है।

।। प्रथमाध्याय का नवम् खण्ड संपूर्ण।

अथप्रथमाध्यायस्य
दसम खण्ड:

मटचीहतषु कुरूष्याटिक्या सह जायया–
षस्तिर्ह चाक्रायण इभ्यग्रामे प्रद्राणक
उवास।।१।।

सान्वय शदार्थ:– कुरूषु = कुरूदेश में, मटचीहतेषु = ओलो से अन्न नाश होने पर, चक्रायणः = चक्र का पुत्र, उपस्थितः = उपस्ति, आटिक्या = आटि की, जायया सह = स्त्री सहित, मद्राणकः = मरणासन्न दशा के, पास इभ्य ग्रामे = हस्तिपको,

के गांव में, उवास = वास किया।

भावार्थ:– ओलोंकी वर्षा से अन्न का नाश होने पर कुरूदेश में दुष्काल पड़ जाने के कारण चक्र के पुत्र उषस्ति मे अपने देश को छोडकर अप्राप्त यौवन अपनी स्त्री आटि की के साथ भ्रमण करते करते अन्न नहीं मिलने से मरणापन्नदशा में हस्तिपक को (हाथी वालो के गांव में आकर आश्रय लिया।

स हेभ्यं कुल्माषान्खादन्तं बिभिक्षे तँ होवाच। नेतोन्ये विद्यन्ते यञ्च ये म इम उपनिहिता इति ।।२।।

सान्वय शदार्थ:– सः = वह, कुल्माषान् = भुने हुए उडदों को, खादन्तम् = खाते हुए, इभ्यम् = हाथीवान् को, विभिक्षे ह = याचना करता हुआ, तम् = उसको, उवाच ह = बोला, इत = इनसे, अन्ये = और , न, नहीं, विद्यन्ते = है, यत्–च = जिस ने, ये = जो, इमे= यह, मे = मेरे पात्र, में, उपनिहता: पड़े है, इति = इस प्रकार।

भावार्थ:–उषस्ति ने अपनी इच्छा से, खड़े हुए उडद खाने वाले एक हाथीवान् के पास जाकर वह उडद मांगे उसको उडद मांगते हुए देखकर उस हस्तिपक ने कहा कि मै जो खा रहा हूँ, इन उच्छिष्ट उडदों के अतिरिक्त और उडद मेरे पास नहीं है, मेरे पास जो कुछ है वह इस पात्र में ही है।

एतेषां मे देहीति होवाच तानस्मै प्रददौ हन्तानुपानमित्युच्छिष्टं वै मे पीतं

स्यादिति होवाचा।।३।।

सान्वय शदार्थ :– एतेषां = इनमें से, मे = मुझे, देहि = दे, इति = ऐसा, उवाचह = बोला, तान् = उनको, अस्मै, = इसके अर्थ प्रददे = देता हुआ, हन्त = क्या, अनुपानम् = पीछे से जल पियोगे, इति = ऐसा कहने पर, वै = निश्चय, मे = मुझ करके, उच्छिष्टम् = झूठा, पीतम् = पिया हुआ, स्यात् = होगा, इति = ऐसा = उवाचह = बोला।

भावार्थ :– हस्तिपक की बात सुनकर उषास्ति ने कहा कि इनमें से कुछ मुझे दे, तब हस्तिपक ने उनमें से ही कुछ थोड़े से उडद दिये और फिर कहा कि लो खाकर कुछ जल पी लो, तब उषस्तिने कहा कि यह जल पीने से तो मुझे उच्छिट पीने का दोष लगेगा।

न स्विदेऽतेप्युच्छिष्टा इति न वा अजी–
विष्यमिमान खादन्निति होवाच, कामो
म उदकपानमिति।।४।।

सान्वय शदार्थ :– स्वित् = क्या, एते–अपि= यह भी उच्छिष्टाः = उच्छिष्ट, न = नहीं, इति = ऐसा कहने पर , इमान् = इनको, अरवादन् = नहीं खाता हुआ, वै = निश्चय, न = नहीं, अजीविष्यम् = जीऊंगा, इति = ऐसा, उदकपानम् = जलपान, मे = मेरा, कामः = इच्छा पूर्वक होगा, इति = ऐसा उवाचह = बोला।

भावार्थ :– यह सुनकर हस्तिपक ने कहा कि आपने जो उडद लिये थे, यह क्या उच्छिष्ट नहीं थे, उषस्ति ने उत्तर दिया। कि

इन उडदों को नहीं खाता तो मेरे जीवन की रक्षा नहीं हो सकती थी, इसलिये ही मैनें यह खा लिये, परन्तु पानी तो इस समय मेरी इच्छानुसार अन्यत्र भी मिल सकता है, इस कारण में उच्छिष्ट जल नहीं पीऊंगा।

स ह खादित्वाऽतिशेषाञ्जायाया आज–
हार साऽग्र एव सुभिक्षा बभूव तान्प्र–
तिगृह्य निदधौ ॥५॥

सान्वय शदार्थ:– सः = वह, खादित्या = खाकर, अतिशेषान् = शेष बचे उड़दों को, जायायै = स्त्री के अर्थ, आजहार ह = देता हुआ, सा = वह, अग्रे–एव = पहले ही, साभिक्षा = भिक्षा को प्रासकर, बभूव = हुई, तान् = उनको, प्रतिगृह्य = लेकर निदधौ = स्थापन करती हुई।

भावार्थ:– ऐसा कहकर उषस्ति ने हस्तिपक के झूंठे उडद कुछ खाकर जो शेष रहे वह अपनी स्त्री को अर्पण करे, आटिकी इससे पहले ही ऐसे कुछ उडद पाकर खाचुकी थी, इसलिये उषस्ति के दिये हुए यह उडद लेकर रख दिये।

स ह प्रातः संजिहान उवाच यद्दता–
न्नस्य लभेमहि लभेमहि धनमात्राँ राजासौ
यक्ष्यते स मा सर्वैरार्त्विज्यैर्वृणीतेति ॥६॥

सान्वय शदार्थ:– स=, वह, प्रातः = प्रातः काल के समय, संजिहानः = शय्या को त्यागता हुआ, उवाच ह = बोला, अन्नस्य = अन्न के, यत्–वत् = कुछ एक भाग को, लभेमहि

= पावै, धन मात्राम् = धन की मात्रा को , लभेमहि = पावें, असौ = यह, राजा= राजा, यक्ष्यते = यज्ञ करेगा, स: = वह, माम् = मुझको, सर्वे: = सब, आत्विज्यै: = ऋषिओ के साथ, वृणीत = वरण करले, इति = इस प्रकार।

भावार्थ :– इसके पश्चात् उषस्ति ने प्रात: काल के समय शय्यासे उठकर कहा कि कुछ एक अन्न पाने पर उसको भोजन कर के राजा के यहां जाऊँ तो यथेष्ट धन लाऊं, यहां राजा यज्ञका आरम्भ करने वाला है, वह और ऋत्विजों के साथ मेरा भी वरण कर लेगा।

तं जायो वाच हन्त पत इम एव कुल्माषा

इति तान्खादित्वामु यज्ञं विततमेयाय।।७।।

सान्वय शदार्थ :– जाया = स्त्री, तम = उसको, उवाच = बोली, हन्त = हां ये=जो, इमे = ये, कुल्माषा: = भुने हुए उडद, ते = तुमने, एव = ही, दत्ता: = दिये थे, इति = इस प्रकार, तान् = इनको, खादित्वा = खाकर, अमुम् = इस विततम् = फैले हुए , यज्ञम् = यज्ञ को, एयाय = गया।

भावार्थ :– यह सुनकर उनकी स्त्री आटिकी ने कहा की आपने कल मुझे जो उडद दिये थे वही यह रखे है उनको खालो, तब उषस्ति खाकर यज्ञ में गये।

तत्रोद्गातृनास्तावे स्तोष्यमाणानुपोप–

विवेश स ह प्रस्तोतार मुवाच।।८।।

सान्वय शदार्थ :– तत्र = वहां, आस्तावे = स्तुति करने के स्थल मे , स्तोष्यमाणा नाम् = स्तुति करने वाले, उद्गातृणां =.

उद्गाताओं के, उप = समीप में, उपनिवेश = बैठा सः = वह, स्तोतारम् = स्तोता को, उवाच–ह = बोला।

भावार्थ :– वह यज्ञ स्थल में जाकर स्तुति के स्थान में स्तुति करने वाले उद्गाताओ के समीप में बैठे, तदनन्तर प्रस्तोता से कहा।

प्रस्तोतर्या देवता प्रस्तावमन्वायत्ता तां
चेदविद्वान्प्रस्तोष्यसि मूर्घा ते विपति–
ष्यतीमि।।९।।

सान्वय शदार्थ :– प्रस्तोता = हे प्रस्तोत्ता ! या = जो, देवता = देवता, प्रस्तावम् = प्रस्ताव भाग को, अन्वायत्ता = अनुगत है, चेत् = जो, ताम् = उसको, अविद्वान् = न जानता हुआ, स्तोष्यति = स्तुति करेगा, ते = तेरा = मूर्धा = मस्तक, विपतिष्यति = गिरेगा, इति = इस प्रकार।

भावार्थ :– हे प्रस्तोता ! जो देवता स्तुति भाग के अनुगत रहता है उसको बिना जाने उद्गान करेगा तो तेरा मस्तक गिर जायगा।

एवमेवोद्गातारमुवाचोद्गातर्या देवतोद्गीथ
मन्वायत्ताद्गा तां चेदविद्वानुद्गस्यसि मूर्धा
ते विपतिष्यतीति ।।१०।।

सान्वय शदार्थ :– एवम्–एव = ऐसे ही , उद्गातारम् = उद्गाता को, उवाच = बोला, उद्गातः = हे उद्गाता, या = जो, देवता = देवता, उद्गीथम् = उद्गीथ के अन्वायत्ता = अनुगत्त है, चेत् = जो, ताम् = उसको, अविद्वान् = नहीं जानता हुआ,

उद्गास्यति = उद्गान करेगा, ते = तेरा, मूर्धा = मस्तक, विपतिष्यति गिर जायगा, इति = इस प्रकार।

भावार्थः– इसी प्रकार उद्गाता से कहा कि हे उद्गाता ! जो देवता उद्गीथ भाग में अनुगत है, यदि तुम उसको बिना जाने उद्गान करोगे तो तुम्हारा मस्तक गिर जायगा।

एवमेव प्रतिहर्तारमुवाच प्रतिहर्त्तर्या

देवता प्रतिहारमन्वायत्ता तां चेदविद्वा–

न्प्रतिहरिष्यसि मूर्धा ते विपतिष्यतीति

ते ह समारतातूष्णीमासांचक्रिरे।।११।।

सान्वय शदार्थः– एवम्=एव = ऐसे ही, प्रति हर्त्तारम् = प्रतिहर्त्ताको उवाच, बोला, प्रतिहर्त्तः = हे प्रतिहर्त्ता, या = जो है, चेत् = जो, साम्= उसको, अविद्वान् = न जानता हुआ, प्रतिहरिष्यसि = प्रतिहार करेगा, ते = तेरा, मूर्धा = मस्तक, विपतिष्यति = गिरेगा, इति = इस प्रकार, ते = वह, समारताः = कर्म से उपरत, तूष्णीम् = मौन, आसांचक्रिरे = होते हुए।

भावार्थः– ऐसे ही प्रति हर्त्ता से भी कहा, कि हे प्रतिहर्त्तः ! जो देवता प्रतिहार के अनुगत है, यदि तुम उसको बिना जाने प्रतिहार करोगे तो तुम्हारा मस्तक गिर जायगा, यह सुनकर स्तोता, उद्गाता तथा प्रतिहर्त्ता अपने अपने कर्म को छोडकर मस्तक गिरने के भय से मौन होकर बैठे रहा।

।। प्रथमाध्याय का दशम खण्ड संपूर्ण।

अथप्रथमाध्यायस्य

एकादश : खण्ड :

अथ हैनं यजमान उवाच भवन्तं वा अहं विविदिषाणीत्युषस्मितिरस्मि चाक्रा– यण इति होवाच ।।१।।

सान्वय शदार्थ :– अथ = अनन्तर, यजमानः = यजमान, एनम् = इसको, उवाच– ह = बोला, वै = निश्चय, अहम् = मैं, भगवन्तम् = आपको विविदिषाणि = जानना चाहता हूँ, इति = इस प्रकार, चाक्रायणः = चक्र का पुत्र, उषस्तिः = उषस्ति, अस्मि = हूँ, इति =ऐसा, उवाचह = बोला ।

भावार्थ :– तदनन्तर यजमान राजाने कहा कि हे भगवान् ! मैं आपका परिचय जानना चाहता हूँ, इस पर उषस्ति ने कहा कि मै चक्र का पुत्र उषस्ति हूँ।

सहोवाच भगवन्तं वा अहमेभि : सर्वै– रार्त्विज्यै :पर्यैषिषं भगवतो वा अहम– वित्त्याऽन्याऽन्यानवृषि ।।२।।

सान्वय शदार्थ :– सः = वह, उवाच–ह = बोला, अहम् = मैं, एभि : = इन, सर्वैः = सब, आर्त्विज्यैः = ऋत्विजों के साथ भगवन्तम् = आपको, वै = निश्चय, पर्यैषिषम् = अन्वेषण करता हुआ, भगवतः = आपके, अवित्या = नहीं मिलने से, अन्यान् वै = औरों को ही, अवृषि = वरण किया।

भावार्थ :– राजा ने कहा कि मैंने इन याज्ञियों के साथ आपका

भी अन्वेषण किया था परन्तु आपके नहीं मिलने से अन्त में उनका ही वरण कर लिया है।

भगवां स्त्वेव मे सर्वैरार्त्विज्यैरिति,
तथेत्यथ, तर्ह्येत, एव समतिसृष्टाः स्तुवतां
यावत्त्वेभ्यो धनं दद्यास्तावन्मम दद्या
इति, तथेति ह यजमान उवाच।।३।।

<u>सान्वय शदार्थः–</u> मे = मेरे, सर्वैः = सब, आर्त्विज्यै : = ऋत्विजो के साथ, भगवान् तु एव = आपही, इति = ऐसा कहने पर, तथा–इति = उस तरह ही होगा, इस प्रकार कहा अथ अब, तर्हि = जो, एते–एव = य ही, समति सृष्टाः = आज्ञा दिये हुए, सावताम् = स्तुति करें, तु = परन्तु, एभ्यः = इनको, यावत् = जितना, धनम् = धन, दद्याः = दो, तावत् = उतना ही मम = मुझ को, दद्याः = दो, इति = ऐसा कहा। यजमानः = यजमान्, तथा इति = ऐसा ही होगा इस प्रकार, उवाच– ह= बोला।

<u>भावार्थ:–</u> अब यदि भाग्यवश आप आ गये है तो इनके साथ आपसी मेरे यज्ञ में ऋत्विक्र्म कीजिये, उषस्ति ने कहा, कि बहुत अच्छा, परन्तु आप इन सभी को जितना धन दे उतना ही मुझे देना, मैं आज्ञा देता हूं कि आपके पूर्व से वरण किये हुए ऋत्विक् ही स्तुति आदि कर्म करें, राजा ने कहा, कि आप जैसी आज्ञा करेंगे वही होगा।

अथ हैनं प्रस्तोतोपससाद प्रस्तोतर्या

देवता प्रस्तावमन्वायत्ता तां चेदविद्वा

न्प्रस्तोष्यसि मूर्धा ते विपतिष्यतीति मा

भगवानवोचत्कतमा सा देवतेति ।।४।।

सान्वय शदार्थः– अथ = अनन्तर, प्रस्तोता = स्तुति कर्म करने वाला, एनम्–उपससादह = इनके समीप आया, भगवान् = आप, मा = मुझको, अवोच = कहते थे, प्रस्तोतः = हे प्रस्तोता, या = जो, देवता = देवता, प्रस्तावम् = प्रस्ताव के, अन्वायत्ता = अनुगत ह, ताम् = उसको, चेत् = जो, अविद्वान् = नहीं जानता हुआँ, प्रस्तोष्यसि = स्तुति करेगा ते = तेरा मूर्धा = मस्तक, विपतिष्यति = गिरेगा, इति = इस प्रकार, सा= वह, देवता = देवता, कतमा = कौनसा है इति = इस प्रकार।

आशयः– तदनन्तर उद्गाता ने विनीत भाव से उषस्ति के समीप आकर कहा कि – हे भगवन्! आपने जो मुझसे कहा था कि जो देवता प्रस्ताव भाग के अनुगत है तुम यदि उसको नहीं जानकर स्तव करोगे तो तुम्हारा मस्तक गिर जायगा, वह देवता कौन सा है? मैं आपसे उसको जानना ाहता हूँ।

प्राण इति होवाच सर्वाणिह वा इमानि

भूतानि प्राणमेवाभिसंविशन्ति प्राणम–

भ्युज्जिहते सैषा देवता प्रस्तामन्वायत्ता

तां चेदविद्वान्प्रास्तोष्यो मूर्धा ते व्यप–

तिष्यत्तथोक्तस्य मयेति ।।५।।

सान्वय शदार्थ :– प्राणः = प्राण, इति = ऐसा, उवाच–ह = बोला, सर्वाणि = सब, इमानि = ये, भूतानि = प्राणी, वै = निश्चय, प्राणम् एव = प्राण में ही, अभिसंविशन्ति = प्रवेश करते है, प्राणम् अभ्युज्जिहते = प्राण में से ही निकलते है, सा = वह, एषा = यह देवता = देवता, प्रस्तावम् = प्रस्ताव के, अन्वायत्ता = अनुगत है, चेत् = जो, ताम् = उसको विद्वान् = नहीं जानता हुआ भी, प्रस्तोष्यः = स्तुति करता, मया = मुझ से , तथा तस्य = उस प्रकार कहे हुए, तेष्यत् = तेरा, मूर्धा = मस्तक, व्यपतिष्यत् = गिर पड़ा है।

भावार्थ :– उषस्ति ने कहा कि प्राण ही देवता हे यह सभी मूल प्रलय समय में प्राण में ही प्रवेश करते है तथा सृष्टि काल में प्राण में से ही प्रकट होते है, इसलिये वह प्राण ही प्रस्ताव भावका अनुगत देवता है, इस देवता को बिना जाने यदि तू स्तुति करता तो मेरे कथनानुसार तेरा मस्तक गिर जाता।

अथ हैन मुद्गातोपससादोद्गातर्या देव–
तोद्गीथमन्वायत्ता तां चेदविद्वानुद्गा
स्यसि मूर्धा ते विपतिष्यतीति मा
भगवानवोचत्कतमा सा देवतेति ।।६।।

सान्वय शदार्थ :– अथ = अनन्तर, उद्गाता = उद्‌गान कर्म का कर्त्ता, एनम्–उपससादह = इसके समीप आकर बोला, भगवान् = आप, मा = मुझ से, अवोचन् = कहते थे, उद्गातः = हे, उद्गाता, या = जो, देवता = देवता, उद्‌गीथम् = उद्‌गीथ के अन्वायत्ता = अनुगत है, चेत = जो, ताम = उसको, अविद्वान् नहीं जानता

हुआ, उद्गास्यति = उद्गान करेगा, इति = इस प्रकार, सा = वह, देवता = देवता कानसा है, इति = यह प्रश्न किया।

भावार्थ:- इसके पश्चात् उद्गाता ने विनीत भाव से उषस्ति के पास जाकर कहा कि हे भगवन्! आपने मुझसे कहा था कि जो देवता उद्गीथ का अनुगमन करने वाला है, तुम यदि उसको बिना जाने उद्गान कर्म करोगे तो तुम्हारा मस्तक गिर जायगा, सो वह देवता कौनसा है? यह मै आपसे जानना चाहता हूँ।

आदित्य इति होवाच सर्वाणि ह वा
इमानि भूतान्या दित्यमुच्चै: सन्तं गायन्ति
सैषा देवतोद्गीथमन्वायत्तातां चेदवि-
द्वानुद्गास्यो मूर्धा ते व्यपतिष्यत्तथो-
क्तस्य मयेति।।७।।

सान्वय शदार्थ:- आदित्य: = आदित्य, इति = ऐसा , उवाच - ह = बोला, वै = निश्चय, इमानि = यह, सर्वाणि = सब, भूतानि = प्राणी, उच्चै: सन्तम् = उदय होते हुए, आदित्यम् = आदित्य को, गायन्ति = गाते है, सा = वह, एषा = यह, देवता = देवता, उद्गीथम् = उद्गीथ के, अन्वायत्ता = अनुगत है, चेत् = जो साम् उसको, अविद्वान् = नहीं जानता हुआ, उद्गास्य: = उद्गान करता, मया = मुझ करके, तथोक्तस्य = उस प्रकार कहे हुए, ते = तेरा, मूर्धा = मस्तक, व्यपतिष्यत् = गिर जाता, इति = इस प्रकार।

भावार्थ :– उषस्ति ने कहा, कि आदित्य ही वह देवता है क्योंकि यह सब प्राणी आदित्य के उदय होने पर ऊंचे स्वर से गान करते है, इसलिये आदित्य देवता ही उद्गीथ का अनुगामी है, उस देवता को बिना जाने यदि तुम उद्गान कर्म करोगे तो मेरे कथनानुसार तुम्हारा मस्तक गिर पंडता।

अथ हैनं प्रतिहर्त्तोपससाद प्रतिहर्तर्या देवता प्रतिहारमन्वायत्ता तां चेदविद्वा– न्प्रतिहरिष्यसि मूर्धा ते विपतिष्यतीति मा भगवानवोचत्कतमा सा देवतेति।।८।।

सान्वय शदार्थ :– अथ = अनन्तर, प्रतिहर्त्ता = प्रतिहार कर्म करने वाला, एनम् उप ससादह = इसके समीप आकर बोला, भगवान् = आप, मा = मुझसे, अवोचम् = कहते थे, प्रतिहर्त्तः = हे प्रतिहर्त्तांया = जो, देवता = देवता, प्रतिहारम् अन्वायता = प्रतिहार का अनुगामी है, चेत् = सो, ताम् उसको, अविद्वान् = नहीं जानता हुआ, प्रतिहरिष्यषि = प्रतिहार करेगा, ते = तेरा, मूर्धा मस्तक, विपतिष्यसि = गिर जायगा, इति = इस प्रकार, सा = वह, देवता = देवता, कतमा कौनसा है, इति ऐसा कहा है।

भावार्थ :– इसके अनन्तर प्रतिहर्त्ता ने विनीत भाव से उषस्ति के पास जाकर कहा कि– हे भगवन्– आपने कहा था, कि जो देवता प्रतिहार का अनुगामी है उसको बिना जाने प्रतिहार कर्म

करोगे तो तुम्हार मस्तक गिर जायगा सो वह देवता कौनसा है? मैं आपसे जानना चाहता हूँ।

अन्नमिति होवाच सर्वाणि ह वा इमानि भूतान्यन्नमेव प्रतिहरमाणानि जीवन्ति सैषा देवताप्रतिहारमन्वायत्ता तां चेद–विद्वान्प्रत्यहरिष्यो मूर्धा ते व्यपतिष्यत्त–थोक्तय मयेति तथोक्तय मयेति।।९।।

सान्वय शदार्थः– अन्नम् = अन्न, इति = ऐसा, उवाचह = बोला; वै =निश्चय इमानि = यह, सर्वाणि = सब, भूतानि = प्राणी, अन्नम् = अन्न को, प्रतिहरमाणानि = ग्रहण करते हुए ही, जीवन्ति, ह = जीते हैं, सा = वह, एषा = यह, देवता = देवता, प्रतिहारम् अन्वायत्ता = प्रतिहार के अनुगत है, चेत् = जो, ताम् उसको, अविद्वान् = नहीं जानता हुआ, प्रतिहरिष्यः = प्रतिहार कर्म करता मया = मुझ से , तथोत्तस्य = उस तरह कहते हुए, ते = तेरा, मूर्धा = मस्तक व्यपसिष्यत् = गिर जाता।

भावार्थः– उषस्ति ने कहा कि वह देवता अन्न ही है, क्योंकि यह संपूर्ण वाणी अन्न को, ग्रहण करके ही, जीवन धारण करते है, अतएव इस देवता को बिना जाने यदि तुम प्रतिहार कर्म करते तो मेरे कथनानुसार अवश्य ही तुम्हारा मस्तक गिर जाता (इस दशम तथा एकादश खण्ड का भाव यह है कि प्राण शक्ति ने ही पहले सूर्य चन्द्रादि विशिष्ट होकर सौर जगत को पैदा किया है

और प्राण शक्ति अन्न के जडांश के आश्रय से सभी स्थान पर क्रिया करती है। यह प्राण शक्ति ही देह में वाक्य आदि इन्द्रियों की शक्ति रूप से क्रिया करती है, यज्ञों के मंत्र आदि वाक्यों से उच्चारण किये जाते है, इस कारण प्राण शक्ति ही यज्ञ का उपास्य देवता है।

।। प्रथमाध्याय का एकादश खण्ड संपूर्ण।

अथप्रथमाध्यायस्य

द्वादश: खण्ड:

अथात: शौव उद्गीथस्तद्ध बको दाल्भ्यो
ग्लावो वा मैत्रेय: स्वाध्यायमुद्वव्राज ।।१।।

सान्वय शदार्थ:– अथ = अनन्तर, अत: = यहां से, शौव: = श्वान द्वारा देखा हुआ, उद्गीथ: = उद्गीथ प्रस्तूयते = प्रारम्भ किया जाता है, तत्.= उससे, ह = निश्चय, दाल्भ्य: = दल्भ कुमार, मैत्रेय: = मित्रा के गर्भ से उत्पन्न हुआ ग्लाव: = ग्लावनामक,, बको = बक, ऋषि, स्वाध्यायम् = स्वाध्याय करने की, उद्व्राज = बाहर गया।

भावार्थ:– पहले खण्ड में अन्न प्राप्ति की अपेक्षा दिखाई अब श्वन नामक ऋषि से दृष्ट= उद्गीथ की प्रस्तावना की जाती है इस संबंध में एक आख्यायिका है, कि मित्रा के गर्भ में उत्पन्न हुए दल्भ के पुत्र जिनकों ग्लाव भी कहते थे, वह बक ऋषि वेद का पारायण करने को प्रतिदिन गांव से बाहर जाया करते थे।

तस्मै श्वाश्वेतः प्रादुर्बभूव तमन्ये श्वान उपसमेत्यो चुरन्नं नो भगवानागायत्व–शनायाम वा इति ।।२।।

सान्वय शदार्थ:– तस्मै = उसके अर्थ, श्वेतः = श्वेत, श्वान् = श्वान, प्रादुर्बभूव प्रकट हुआ, अन्ये = और, श्वानः =श्वान, तत् = उसके, उपसमेत्य = समीप आकर, ऊचुः = बोले, भगवान् = आप, नः = हमारे अर्थ, अन्नम् = अन्न को, आयतु = लाओ, वै = निश्चय, अशंना यामः भूखे हैं, इति = इस प्रकार।

भावार्थ:– एक समय स्वाध्याय से प्रसन्न हुए उद्गीथ देवता, बक ऋषि के ऊपर अनुग्रह करने के निमित्त श्वेत कुक्कुर का रूप धारण करके उनके सामने प्रकट हुए, उस समय और कितने ही श्वान श्वेत श्वान के पास आकर कहने लगे कि इस भूख से व्याकुल हो रहे हैं, इस कारण आप आगान के द्वारा हमको अन्न प्राप्त कराओ।

तान्होवाचे हैव मा प्रातरूपसमीयातेति तद्ध बको। दाल्भ्यो ग्लावो वा मैत्रेयः प्रतिपालयांचकार।।३।।

सान्वय शदाथ:– तान् = उनको, उवाच ह : = बोला, प्रातः = प्रातः काल में इह एव = यहां ही, मा = मुझको, उपसमीयात् = समीप आना, इति = इस प्रकार, तत् = इसको दाल्भ्यः = दल्भ पुत्र, वा = और , मैत्रेयः = मित्रा के गर्भ से उत्पन्न ग्लावः = ग्लाव नामक, बकः = बक, प्रतिपाल यांचकार ह = प्रतीक्षा करते हैं।

भावार्थ :– उनकी इस बात को सुनकर श्वेत श्वान ने कहा कि तुम कल प्रातः काल वहां ही मेरे पास आना, बक यह सुनकर चित्त में कुतुहल मान घर नहीं आ वहां ही रहा तथा प्रातः काल उनके आने की प्रतीक्षा करने लगा।

ते ह यथैवेदं बहिष्पवमानेन स्तोष्य–
माणाः सँरब्धाः सर्पन्तीत्येवमाससृ–
पुस्तेह समुपविश्य हिं चक्रु ः।।४।।

सान्वय शदार्थ :– स्तोष्यमाणाः =अध्वर्यु आदि, बहिष्पव मानेन =बहिष्पव मान के द्वारा, यथा एव = जैसे, संरब्धाः = संलग्न हुएं, सर्पन्ति = परिभ्रमण करते है, एवम्–इति = इस प्रकार, ते = वे, इदम् = पूछं को, गृहीत्वा = ग्रहण कर केआससृपुः = परिभ्रमण करते हुए, ते = वे, समुपविश्य = बैठकर, हिंचकुः ह = हिंकार किया।

भावार्थ :– प्रातः काल होने पर वह पहले के सदृश प्रकट होकर अध्वर्यु से यजमान पर्यन्त यज्ञ कर्त्ता, जैसे बहिष्पवमान नामक स्तोत्र का उच्चारण करते करते परस्पर मिलकर घूमते है, उसी तरह ही मुख से परस्पर की पूंछ पकडकर भ्रमण करने लगे, फिर बैठ कर पंचम कंडिका रूप हिंकार का ऊंचे स्वर से गान करने लगे।

ओ३ मदा३ मों३ पिबा३ मों३ देवो वरूणः
प्रजापतिः सविता२न्नमिहाऽऽ२हर२दन्न–
पतेऽऽन्नमिहा२हरा२हरो३मिति।।५।।

सान्वय शदार्थ:– ॐ अदाम: = हम खायेंगे, ॐ पिबाम: = हम पियेंगे, ॐ देव: = देवता, वरूण: = वरूण, प्रजापति = प्रजापति, सविता = सविता, इह = यहाँ, = अन्नम् = अन्न को, आहरत् = आहरण करे, अन्नयसे = हे अन्नपते, इह = यहां, अन्नम् = अन्न को, आहर = दो।

भावार्थ:– वह गान यह है कि हम भोजन करेगें, हम पान करेंगे, प्रजापति वरूण और सविता यह हमे अन्न दें।

।। प्रथमाध्याय का द्वादश खण्ड संपूर्ण।

अथप्रथमाध्यायस्य

त्रयोदश: खण्ड:

अयं वाव लोको हाउकारो वायुहाई–
कारश्चन्द्रमा अथकार:। आत्मेह कारो–
ऽग्निरीकार:।।१।।

सान्वय शदार्थ:– अयम् वाव = यह ही, लोक: = लोक, हा ॐकार: = हा उकार है, वायु: = वायु, हा इकार: = हा इकार है, चन्द्रमा: = चन्द्रमा, अथ कार: = अथकार है, आत्मा = आत्मा, इहकार: = इहकार है, अग्नि: = अग्नि, ईकार: = ईकार है।

भावार्थ:– अब सामगान करने के लिए स्तोमनामक अक्षरों की उपासना कहते है कि इन अक्षरों का अर्थ नहीं होने पर भी गान

का फल होता है, यह लोकही हा के आगे उच्चारण किया हुआ ॐकार है, अतः उस ॐकार की पृथ्वी दृष्टि से उपासना करे, वायहा के आगे उच्चारित इकार है तथा चन्द्रमा अथ है, क्योंकि अन्न का आत्मा चन्द्रमा है और थकार का उच्चारण अन्न में होता है, 'इह' की आत्म दृष्टि से उपासना करे, क्योंकि आत्मा को प्रत्यक्ष इह शब्द से कहते है तथा इकार में अग्नि दृष्टि करे, कारण कि जिस में ईकार का गान होता है उस को आग्नेय साम कहते है।

आदित्य ऊकारो निहव एकारो विश्वे
देवा ओहोयिकार: प्रजापतिर्हिंकार:
प्राण :स्वरोऽन्नं या वाग्विराट् ।।२।।

सान्वय शदार्थ :– आदित्यः = आदित्य, ॐकारः = ॐकार, निहवः = निहव, एकारः = एकार, विश्वेदेवाः = विश्वेदेव, आ हो इकारः = ओ हो यिकार, प्रजापतिः = प्रजापति, हिंकारः = यिकार, प्राणः = प्राण, स्वर = स्वर, अन्नम् = अन्न, या = या वाक् = वाक्, विराट = विराट् है,

भावार्थ :– ॐकार की आदित्य दृष्टि से, एकार की निहव दृष्टि से, स्वर की प्राण दृष्टि से , या की अन्न दृष्टि से क्योंकि मनुष्य अन्न से ही या कहिये गमन करना है तथा वाक् से विराट् दृष्टि से उपासना करें।

अनिरूक्तस्त्रयोदश: स्त्रोम: संचरो
हुंकार: ।।३।।

<u>सान्वय पदार्थ :–</u> अनिरूक्त: = अनिर्वचनीय, संचर: = शाखा भेद से, भिन्न हुंकार: = हुंकार, त्रयोदश: = तेरहवां, स्तोम: = स्तोम है।

<u>भावार्थ :–</u> हुंकार रूप तेरहव स्तोमाक्षर का स्वरूप कहा नहीं जा सकता है, क्योंकि वह शाखा भेद से भिन्न–भिन्न प्रकार का है, इस कारण उसको किसा स्वरूप का कल्पना करके उपासना करे।

दुग्धेऽस्मै वाग्दोहं यो वाचो दोहो–
ऽन्नवानन्नादो भवति य एतामेवँ सा–
म्ना मुपनिषदं वेदोपनिषदं वेद।।४।।

<u>सान्वय शदार्थ :–</u> य: = जो, एवम् = इस प्रकार, एषाम् = इस, साम्नाम् = सामों के, उपनिदषदम् = उपनिषदों को, वेद = जानता है,अस्मै = इसके अर्थ, वाक् = वाक् वाच: वाणी का, य: = जो, दोह: = फल है, दोहम् = उस फल को, दुग्धे = दुह देता है, अन्नवान् = अन्न वाला, अन्नाद: = अन्न का भोक्ता, भवति = होता है।

<u>भावार्थ :–</u> जो पुरूष साम के अवयव भूत स्त्रोमाक्षर विषयक दर्शन को जानता है उस साधक के लिये यह वाक् वाणी को देती ह, तथा वह पुरूष अन्नशाली और अन्नमोक्ता होता है।

।। प्रथमाध्याय का त्रयोदश खण्ड संपूर्ण।।

।। प्रथमाध्याय संपूर्ण।।

चि. गो श्री १०५ श्री भूपेश कुमार जी
(श्री विशाल बाबा)



नाथद्वारा

जन्म दिनांक
5 जनवरी, 1981

जन्म तिथि : पौष कृष्णा ३०
विक्रम संवत् २०३७



इण्डिया ऑफसेट प्रिन्टर्स, अजमेर ☎ 9314393305